ISSN. 0976-3368

आयुष दर्पण

स्वास्थ्य जगत का सजग प्रहरी (त्रैमासिक)

वर्ष 02 अंक 03 जुलाई-सितम्बर 2011

प्रधान संपादक
डॉ. बी.डी. जोशी

सम्पादक
डॉ. नवीन चन्द्र जोशी
एवं
सलाहकार सम्पादक मंडल

विशेष प्रतिनिधि
पीयूष बराड़ (गुजरात)
डॉ. सुशान्त शशिकांत पाटिल(महाराष्ट्र)
डॉ. अजय श्रीवास्तव (उत्तरप्रदेश)
एम.पी. शर्मा (छत्तीसगढ़)
डॉ. अनिल पोखरेल (नेपाल)
एवं अन्य

कानूनी सलाहकार
प्रमोद पन्त

तकनीकी सहसंपादक
मुग्धा जोशी

ले-आउट डिजाइन
सुनील पंवार, राजेन्द्र प्रसाद

व्यवसायिक प्रतिनिधि
नवीन पन्त
अवनीश कुमार त्यागी

संपादकीय कार्यालय
मुरली गंगा स्मृति भवन, तिलढुकरी,
पिथौरागढ़-262501(उत्तराखण्ड)
टेली/फैक्स नं. + 91 5964-223049
मो. +91 9411137993

ई-मेल :
ayushdarpan@gmail.com
Web site :
www.ayushdarpan.com
www.ayushdarpan.org
www.ayushdarpannepal.com

विवरणिका

क्र.सं.	विवरण	पृष्ठ
1-	संपादकीय/प्रतिक्रियायें	2
2-	'घी' आयु बढ़ाने वाला एक रसायन	3
3-	हिमालयी क्षेत्र की अद्‌भुत औषधि कीड़ा-जड़ी	7
4-	'साइनोसाइटिस' एवं सिरदर्द का योग द्वारा उपचार	9
5-	बुखार में कैसा हो खान-पान	14
6-	होम्योपैथी: दवाओं का चुनाव हो कैसे	18
7-	'क्षार-सूत्र'	22
8-	पिण्ड स्वेद: पंचकर्म की लोकप्रिय चिकित्सा	24
9-	गुदा रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा	27
10-	जोड़ों का दर्द अब न हो परेशान, दही है बड़ी गुणी पर कब जाने अब!	29
11-	वैद्यजी सुनिये	32
12-	ब्रह्मकमल प्रकृति की अद्‌भुत औषधि	33
13-	आयुर्वेदिक नुस्खे	34
14-	जानिये अपनी प्रकृति को	35
15-	दुनिया एक व्यायामशाला	36
16-	जीवन जीने का आयुर्वेदिक फंडा	37
17-	कायाकल्प के जनक महर्षि च्यवन	38
18-	आयुष दर्पण समाचार	39

आयुष दर्पण
स्वास्थ्य जगत का सजग प्रहरी (त्रैमासिक)

मुरली गंगा स्मृति भवन, तिलढुकरी, पिथौरागढ़-262501 (उत्तराखण्ड)

सदस्यता शुल्क

एक वर्ष	₹ 60
दो वर्ष	₹ 100
पांच वर्ष	₹ 400
आजीवन	₹ 2000

बैंक ड्राफ्ट/चैक/मनीआर्डर : संपादक, आयुष दर्पण, मुरली गंगा स्मृति भवन, तिलढुकरी, पिथौरागढ़ (उत्तराखण्ड) के नाम प्रेषित करें।

नाम .....
पता .....
.....
टेलीफोन नं. .....
ई-मेल .....

आयुष दर्पण की सदस्यता शुल्क प्रेषित करने के पश्चात उसकी रसीद प्राप्त करना सुनिश्चित करें।

कृपया उपरोक्त जानकारी को संलग्न करना सुनिश्चित करें।

आयुष दर्पण स्वास्थ्य पत्रिका में प्रकाशित लेख चिकित्सकीय ज्ञान हेतु प्रसारित हैं। चिकित्सकीय परामर्श के बिना इनका प्रयोग न करें। किसी भी लेख/समाचार पर 60 दिनों के अन्दर जानकारी ली जा सकती है। विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र पिथौरागढ़ होगा।

स्वामी, संपादक, मुद्रक एवं प्रकाशक नवीन चन्द्र जोशी द्वारा प्रीतिका प्रिन्टर्स, आर.जी.एम. प्लाजा, 23-चकराता रोड, देहरादून, (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं मुरली गंगा स्मृति भवन, निकट गुंज्याल खेड़ा, तिलढुकरी, पिथौरागढ़ (उत्तराखण्ड)-262501 से प्रकाशित

भारतीय चिकित्सा पद्धतियाँ दुनिया की विकसित चिकित्सा पद्धतियों का मार्गदर्शक रही हैं।भारत ने अनेक वैज्ञानिक तथ्यों से दुनिया को परिचित कराया है। प्रख्यात वैज्ञानिक आईस्टीन के अनुसार यदि दशमलव एवं शून्य जैसे गणितीय अंकों से दुनिया का परिचय भारत ने नहीं कराया होता तो आज दुनिया कुछ और ही होती। भारत चिकित्सा विज्ञान में भी विश्व गुरू था, इसका एक प्रमाण निम्नवत है:- आयुर्वेद के ग्रंथ सुश्रुत संहिता में प्लास्टिक सर्जरी का सन्दर्भ मिलता है,जिसमें गले से त्वचा लेकर कान की पाली को बनाने का विस्तृत वर्णन है, आचार्य सुश्रुत के बाद 'राईनोप्लास्टी' की यह तकनीक भारत के कुछ पारंपरिक वैद्यों द्वारा छुपकर बाद में प्रयोग की जाती रही थी । कोवास्जी एक बैलगाड़ी चलाने वाले की गाथा इस तथ्य को प्रमाणित करती है।

'कोवास्जी'अपनी बैलगाड़ी से दक्षिण भारत में रह रहे ब्रितानी सैनिकों को राशन की आपूर्ति करता था, जबकि दक्षिण भारत में टीपू सुल्तान की सत्ता में फिरंगियों का विरोध जारी था। इस प्रकार कोवास्जी एक बार टीपू सुल्तान के सैनिकों द्वारा पकड़ा गया तथा उसके दंड का निर्धारण उस समय के तौर-तरीके से किया गया, सजा के तौर पर उसकी नाक काट दी गयी थी, बाद में कोवास्जी की नाक एक पारंपरिक चिकित्सक ने सुश्रुत की तकनीक से बनायी थी। इस सर्जरी के गवाह दो ब्रिटिश चिकित्सक बने,जिसका उल्लेख 1794 में ब्रिटेन से प्रकाशित 'जेंटलमेंस मैंगजीन' में किया गया था। 1837 के बाद पूरे ब्रिटेन में भारत की इस तकनीक का प्रयोग किया जाने लगा था।'जेंटलमेंस मैंगजीन' में प्रकाशित इस लेख से उत्साहित होकर जोसेफकोर्प (1758-1740) नामक सर्जन ने सबसे पहले इस तकनीक से सर्जरी की थी।

कार्लफ्रीडलैंड वोनग्राफ ने अपनी पुस्तक'राईनोप्लास्टीक'' में जोसेफकोर्प द्वारा की गयी इस सर्जरी का वर्णन किया था।'राईनोप्लास्टीक' नामक पुस्तक ने यूरोप के सर्जनों को इस तकनीक से प्रोत्साहित करने का काम किया था,जिसका प्रमाण जोनथन नेथोनवारेन ने 1837 में नार्थ अमेरिका में भारतीय तकनीक से की गयी सर्जरी को रिपोर्ट कर किया था। 1897के बाद लगभग भारतीय तकनीक से 142 राईनोप्लास्टीक सर्जरी होने का वर्णन है। यह इस बात का गवाह है,कि भारत चिकित्सा में विश्वगुरू था,और आगे भी रहेगा।

❁❁❁❁

डॉ. नवीन चन्द्र जोशी,
संपादक
(प्रदेश सलाहकार न्यूजपेपर्स एण्ड मैग्जीन फेडरेशन ऑफ इण्डिया)

प्रतिक्रियायें

● आयुष दर्पण पत्रिका का हर माह हमें बेसब्री से इन्तजार रहता है,मैं इस पत्रिका से अधिक से अधिक लोगों को जोड़ने का प्रयास करूँगा।

* कुलदीप सिंह रमोला
रमोला मेडिकल स्टोर,मानपुर चौराहा
कोटद्वार (उत्तराखण्ड)

● आयुष दर्पण पत्रिका को पढ़कर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। सभी चिकित्सा पद्धतियों की नूतन जानकारियों के साथ हर नवीन अंक के लेख संग्रहणीय है।

*डॉ पंकज
ई-26 ए, अग्रसेन नगर, ऋषिकेश,
देहरादून (उत्तराखण्ड़)

पाठकों के नाम संदेश

मित्रों आयुष दर्पण को आपकी अपेक्षा पर खरा उतारने का मेरा प्रयास रहा है,इसी क्रम में विलम्ब से ही सही आपके समक्ष नूतन अंक अधिक सामग्री के साथ प्रस्तुत है। आपकी प्रतिक्रियाओं का हमें सदैव इंतजार रहेगा, जिससे हम इसे और अधिक बेहतर बना सकें। आप अपने सुझाव **editorayushdarpan@gmail.com** पर भेजें।

'घी' आयु बढ़ाने वाला एक रसायन

'घी' प्राचीन काल से ही हमारे भारतीय आहार का प्रमुख घटक रहा है। वर्तमान में खून में कॉलेस्ट्रॉल, लो-डेन्सिटीलिपोप्रोटीन एवं ट्राईग्लिसराइड के बढ़ने के भय से लोग 'घी' के प्रयोग से बचने लगे हैं। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के फैकल्टी ऑफ आयुर्वेद के अर्न्तगत रसशास्त्र विभाग में मेडिकेटेड 'घी' पर कराये गये शोध अध्ययन से इसके जीवाणुरोधी एवं एन्टीसोरायटिक प्रभाव मिलने की जानकारी दी गयी है। 'पंचतिक्तघृत' जिसका निर्माण पाँच अलग-अलग औषधियों से सिद्ध कर होता है, इसे 18 से 24 महीने तक सोरायसिस के रोगियों में प्रयोग कराया गया। प्रोफेसर आनन्द चौधरी के अनुसार इस मेडिकेटेड 'घी' के जीवाणुरोधी एवं सोरायसिसरोधी प्रभाव देखे गये हैं। 'पंचतिक्तघृत' एवं अन्य औषधिसिद्धित घृत का निर्माण के दो वर्ष पूर्व ही प्रयोग कराने का निर्देश दिया गया है। इस इन्टरडिसीप्लेनरी रिसर्च को बी.एच.यू. के डिर्पाटमेंट ऑफ फार्मास्यूटिक्स के विकास कुमार एवं सी.एस.आन्टेन ने डॉ. चौधरी के निर्देशन में सम्पन्न किया है। इन्हीं महत्वपूर्ण जानकारियों को लेख में अनुभवी चिकित्सक द्वारा भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

'घी' एक विश्व प्रसिद्ध रसायन औषधीय पदार्थ है, जो गाय,भैस,बकरी ऊँट,घोडी़ आदि पशुओं के दूध से प्राप्त कर मक्खन द्वारा बनाया जाता है। आयुर्वेदानुसार 'घी' दीर्घायु और यौवन की रक्षा करने वाला रसायन है। आजकल लोगों के मन में 'घी' के बारे में कई भ्रांतियाँ पैदा हो गयी हैं। लोग इसे सेहत के लिए नुकसानदायक मानकर खाना ही बन्द कर दे रहे हैं। परन्तु 'घी' हमारे शरीर के लिए अत्यंत उपयोगी है। अगर इसे उचित मात्रा में सेवन किया जाए,तो यह शरीर को कई पौष्टिक तत्व प्रदान कर दीर्घायु (Elixir of life) प्रदान करने वाला रसायन है।

हम सोचते हैं, कि 'घी' खाने से कॉलेस्ट्रोल का स्तर बढ़ जाता है,हमारे शरीर में मोटापा आ जाता है,दिल की बीमारियाँ हमें घेर लेती है,पर ऐसा नहीं है। शुद्ध 'घी' के सेवन से हड्डियाँ मजबूत होती है। शरीर में ताकत आती है, मस्तिष्क की कार्यक्षमता बढ़ती है, लेकिन हम वैद्यों की सलाह को पुरातनवादी मानकर नकार देते हैं। शायद इसलिए, कि ये फिटनेस के आधुनिक पैमानों परे खरे नहीं उतरते हों,परन्तु सत्य यह है,कि 'घी' के फायदे के बारे में हमें कोई पुख्ता और वैज्ञानिक जानकारी अभी तक नहीं मिली है। असल में देशी 'घी' पर आज तक वैज्ञानिकों ने कोई विशेष शोध ही नहीं किया है। यह एक ऐसा विषय है जिसपर लम्बे शोध की आवश्यकता है।

भारतीय रेस्टोरेंट एवं घरों में ड़ालड़ा आदि वानस्पतिक 'घी' एवं

तेल का अत्यधिक प्रयोग किया जाता है,तथा इसे देशी तथा असली 'घी' के नाम से प्रचारित किया जाता है। वास्तव में यह वनस्पति 'घी' हाइड्रोजिनेटेड वेजीटेबल ऑयल है,जिसमें काफी मात्रा में ट्रांसफेट् पाया जाता है, जो हृदय के लिए घातक है।

पिछले 10-20 वर्षो में हमारे देश में हृदय से सम्बंधित बीमारियाँ तेजी से बढ़ी हैं,जिसके लिए कॉलेस्ट्रोल को जिम्मेदार ठहराया जाता है। प्रायः चिकित्सा विशेषज्ञ लोगों को तला-भुना खाने से मना करते हैं। लोगों ने तेल और मक्खन के साथ 'घी' खाना भी बन्द कर दिया है। जबकि 'घी' उचित मात्रा में लेना हमारे शरीर के लिए नुकसानदेह नहीं है। इसको समझने के लिए हमें हाइडेंसिटीलाइपोप्रोटीन और लोडेंसिटीलाइपोप्रोटीन के अंतर को समझना होगा। हाइडेंसिटीलाइपोप्रोटीन रक्त कणिकाओं से कॉलेस्ट्रोल को अलग करके लीवर में भेज देता है तथा पाचक रसों के साथ मिलकर पाचन क्रिया को ठीक करता है।

'घी' का रासायनिक संगठन (गाय का घी):-

* सैचुरेटेडफैट्री एसिड
* ट्राईग्लिसराइड्स
* मोनोग्लिसराइड्स
* फोस्फोलिपिड्स
* बीटा-कैरोटीन
* विटामीन-'ई'
* विटामीन-'डी' कैलशियम, पोटेशियम, फास्फोरस, मिनरल्स आदि।

'घी' कई मायनों में हमारे शरीर के लिए लाभदायक है,जैसेः-

*'घी' खाने से हमारे शरीर में हार्मोन की मात्रा संतुलित रहती है।

*'घी' हमारे शरीर में कई रसायनों का निर्माण करता है, जिससे पाचन क्रिया मजबूत होती है।

*'घी' से हमें विटामीन-'डी' मिलता है,जिससे हमारी त्वचा की कान्ति तथा हड्डियों को मजबूती मिलती है। बढ़ती उम्र में जोडों के दर्द 'घी' के नित्य सेवन से नहीं सताते हैं।

*'घी' से हमें विटामीन-'ई' मिलता है,जो स्त्रीयों में गर्भधारण की क्षमता को बढ़ाता है।

*'घी'विलियरोलिपिड के अवशोषण को बढ़ाकर प्लाजमा एलडीएल एवं कॉलेस्ट्रोल के स्तर को कम करता है। हमारा शरीर सुचारू रूप से काम करता रहे,इसके लिए आवश्यक है,कि हमें उचित मात्रा में सैचुरेटेडफैट् एवं कॉलेस्ट्रोल मिलता रहे। अगर कॉलेस्ट्रोल पूरी तरह से लेना बन्द कर दिया जाय तो हमारा तंत्रिका तंत्र ठीक से काम नहीं करेगा। कॉलेस्ट्रोल हड्डियों को मजबूत करता है, हार्मोन का संतुलन बनाये रखता है, शरीर में विटामीन-'डी' का निर्माण करता है। इसलिए हमें उचित मात्रा में शुद्ध 'घी' का सेवन करते रहना चाहिए तथा 'घी' का सेवन पूरी तरह से कदापि बन्द नहीं करना चाहिए। एक दिन में चार से पाँच छोटी चमम्च तक 'घी' को भोजन के साथ लिया जा सकता है,इससे शरीर को किसी प्रकार का नुकसान नहीं होता है। अगर किसी व्यक्ति को दिल की बीमारी हो,या उसका कॉलेस्ट्रोल असंतुलित हो,तो भी वह व्यक्ति दिन में एक चम्मच 'घी' आराम से खा सकता है।

'घी' विभिन्न भाषाओं में निम्न नामों से जाना जाता है।

संस्कृत मेंः-घृत,नवनीतक आदि।

हिन्दी मेंः-घी, कुमाऊंनी में-घ्यू, चोक्ख्यूण

मराठी मेंः-तूप, तेलगू मेंः-नेई

अंग्रेजी मेंः-क्लेरीफायड्बटर

लेटिन मेंः- ब्यूओरम,डेप्यूरेटम

'घी' बनाने की सामान्य विधिः-

सर्वप्रथम दूध को लकड़ी या मिट्टी के बर्तन में रखकर दही में बदला जाता है। दही को मथकर मक्खन प्राप्त किया जाता है। मक्खन को एक बर्तन में लेकर धीरे-धीरे उबालकर तबतक पकाया जाता है,जबतक कि मक्खन में रहे दूध के ठोस कण तले में बैठ जायें और फेन-भाग ऊपर आ जाय,इसके बाद फेन को सावधानी से निकालकर 'घी' को बर्तन से चम्मच द्वारा अलग कर दूसरे साफ बर्तन में रख दिया जाता है तथा ठंडा होने पर बर्तन का

ढक्कन भलीभाँति बन्द कर रख दिया जाता है। आवश्यकतानुसार 'घी' का सेवन उचित मात्रा में किया जाता है। 'घी' को रेफ्रीजरेटर में नहीं रखना चाहिए।

'घी' का रंग तथा स्वाद:- यह दूध के स्रोत जिससे मक्खन बनाया जाता है,तथा उसे उबालने व पकाने की उचित विधि पर निर्भर करता है। आयुर्वेद अनुसार 'घी' की औषधीय उपयोगिता निम्न है:-'घी' हमारे अंगों को स्वस्थ रखता है। आयुर्वेद की कई दवाओं में घृत का उपयोग होता है। 'घी' में जब भी कोई दवा या दूसरा पौष्टिक तत्व मिलाया जाता है,तो उस दवा की कार्मुकता दुगनी हो जाती है। कुछ आयुर्वेदिक औषधियाँ जिनके निर्माण में 'घी' का इस्तेमाल किया जाता है,'औषधि सिद्धित घी' कहलाता है, यह कई बीमारियों को दूर कर शरीर को हृष्ट-पुष्ट बनाता है।

फलघृत:- यह घृत खून को बढ़ाने वाला,कामोद्दीपक और अत्यंत वाजीकारक होता है। स्त्रीयों के योनि रोग,हिस्टीरिया और उन्माद पर भी इसके प्रयोग से लाभ मिलता है। बन्ध्या स्त्री के रजोदोष को 'फलघृत' दूर कर संतान उत्पति के योग्य बनाता है।

त्रिफलादिघृत:-इसे दूध के साथ लेने से सभी प्रकार के कृमिरोग दूर होते हैं।

बृहतकल्याणकघृत:-जिस स्त्री के गर्भ न रहता हो,गर्भ ठहरकर नष्ट हो जाता हो तब 'बृहतकल्याणकघृत' का दूध के साथ लम्बे समय तक सेवन करने से संतान की प्राप्ति होती है।

अशोकघृत:-इस औषधिसिद्धित'घी' के सेवन से श्वेतप्रदर,गर्भाशय का दर्द, कमरदर्द, योनि का दर्द, मंदाग्नि, अरूचि आदि नष्ट होते हैं। स्त्री रोगों के लिए यह एक उत्तम औषधि है।

सभी प्रकार के उन्माद को नष्ट करने के लिए 'कल्याणघृत', बुद्धि को बढाने के लिए 'महापैशाचिकघृत', उदर एवं रक्त से सम्बंधित रोगों के लिए 'मंजिष्ठादिघृत' एवं 'महातिक्तघृत', मस्तिष्क रोग के लिए 'षड्बिन्दुघृत' आदि अनेक प्रकार के घृत आयुर्वेद शास्त्रों में बताये गये हैं। कई बीमारियों में 'घी' खाने तथा बाह्य प्रयोग से काफी आराम मिलता है।

'घी' सीने और गले की जलन को दूर करता है तथा गले की खुश्की को मिटाता है। दिमाग को स्फूर्ति देता है।

बच्चों के मसूड़ों पर 'घी' को मलने से दाँत जल्दी निकल आते हैं। नमक के साथ 'घी' को खाने से वात रोगों के उपद्रव दूर होते हैं। मिश्री या शक्कर के साथ 'घी' खाने से रूका हुआ मूत्र खुलकर आता है। रात को सोते समय 'घी' को चेहरे पर मलने से,चेहरे के काले दाग मिट जाते हैं। किसी भी मलनि:सारक औषधि को लेने से पहले अगर तीन दिन तक 'घी' को काली मिर्च के साथ लिया जाय, तो आंत्र स्थित मल मुलायम होकर फूल जाता है और मल के साथ पेट की सारी विकृति बाहर निकल जाती है।

धोया हुआ 'घी':-वाह्य उपचार हेतु

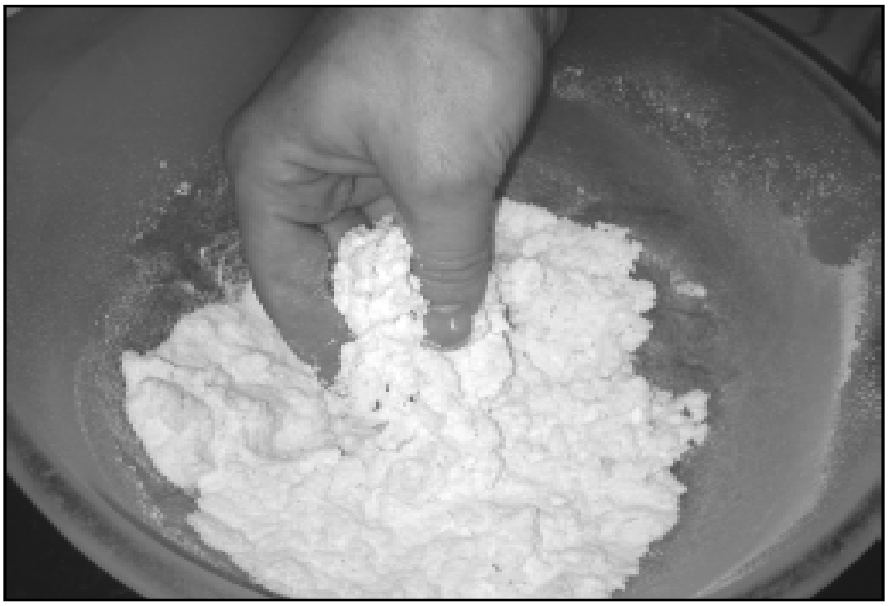

धोया हुआ 'घी' एक अच्छी औषधि है। इसका प्रयोग गठिया,शरीर की सुन्नता,जोडों का दर्द,जोडों की सूजन और पाँव की जलन में किया जाता है। धोये हुए 'घी' के लेप से ततैया के डंक का जहर उतरता है। धोये हुए 'घी' का आन्तरिक प्रयोग नही करना चाहिए।

नवीनघृतः-यह ताजे 'घी' के लिए प्रयुक्त होता है,जो तृप्तिकारक,दुर्बल मनुष्यों के लिए अतिलाभकारी, रूचिकारक तथा नेत्र रोगों के लिए भी हितकारी होता है।

पुराना 'घी':- 10 वर्ष पुराना 'घी' तिमिर रोग में, जुखाम, खाँसी, मूर्च्छा, कुष्ठ, विष, उन्माद और मिर्गी रोग को नष्ट करता है। आयुर्वेद के अनुसार विभिन्न पशुओं के दूध के मक्खन से बना 'घी' अलग-अलग प्रकार से गुणकारी होता है।

जैसेः गाय का 'घी':-आयुर्वेद मत से गाय का 'घी' अन्य 'घी' से उत्तम एवं स्वादिष्ट होता है। यह बुद्धि, कांति और स्मरण शक्ति को बढ़ाने वाला, वीर्यवर्धक, हृदय के लिए हितकारी अग्निदीपक,पाचक एवं यौवन को स्थिर रखने वाला होता है। गाय के 'घी' को अमृत के समान गुणकारी, विष को नष्ट करने वाला तथा नेत्रों की ज्योति को बढ़ाने वाला 'श्रेष्ठ रसायन' बताया गया है। गाय का दूध और 'घी' मिलाकर पिलाने से अफीम आदि स्थावर पदार्थो के विष के प्रभाव को भी दूर किया जा सकता है। गाय का गर्म 'घी' पिलाने से हिचकी बन्द हो जाती है। खाना खाने के बाद गाय के 'घी' में काली मिर्च मिलाकर चटाने से स्वर की विकृति मिट जाती है।

भैंस का 'घी':-भैंस का 'घी' वीर्यवर्धक, भारी,हृदय के लिए हितकारी और पाक में स्वादिष्ट होता है। यह भूख को कम करता है।

बकरी का 'घी':-बकरी का 'घी' अग्निवर्धक, नेत्र के लिए हितकारी श्वास, खाँसी और क्षय रोग में लाभकारी होता है। यह पाक में कटु तथा भूख को बढ़ाने वाला प्रभाव दर्शाता है तथा शीघ्र पच जाता है।

भेड़ का 'घी':-भेड़ का 'घी' पाक में हल्का,विषनाशक हड्डियों को मजबूत करने वाला,मूत्र में आने वाली शर्करा एवं वृक्क की पथरी में लाभदायक होता है। यह गर्भाशय एवं नाडी से सम्बन्धित रोगों में भी प्रभावी होता है।

घोड़ी का 'घी':- यह मधुर, थोड़ा अग्निदीपक,कसैला, प्रभावी मल-मूत्र रोधक,नेत्र रोगों को दूर करने वाला तथा कफ एवं मूर्च्छा को हरने वाला होता है।

निष्कर्ष :-उचित मात्रा में 'घी' खाना शरीर के लिए फायदेमन्द है। इससे तंत्रिकायें मजबूत होती हैं साथ ही अस्थियों को बल मिलता है। 'घी' जोडों के दर्द से बचाव करता है, त्वचा में कान्ति एवं स्फूर्ति का संचार बढाता है। 'घी' का सेवन यौवन को स्थिर रखता है तथा शरीर की वृद्धि में सहायक होता है। 'घी' के सेवन से शरीर में एक किस्म का 'प्लेमिटोसिकएसिड' निकलता है,जो कॉलेस्ट्रोल,इंसुलिन, ग्लूकोज व फैट् को नियंत्रण में रखता है, अर्थात इन सबकी मानव शरीर में उतनी ही वृद्धि होने देता है,जिस मात्रा में इन तत्वों की जरूरत होती है। दार्शनिक चार्वाक के सिद्धान्त के अनुसार 'यावत् जीवेत् सुखम् जीवेत्, ऋृणं कृत्वा घृतम् पिबेत्' संस्कृत की इस उक्ति का अर्थ जबतक जियो सुख से जियो,कर्ज लेकर भी 'घी' पीयो,'घी' के महत्व की व्याख्या करता है।

❁❁❁❁❁

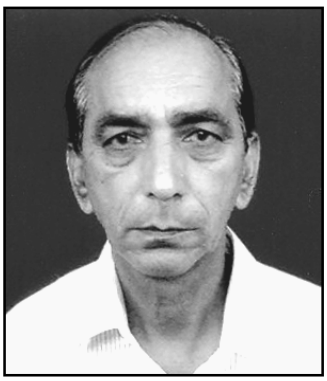

डॉ. डी. एन.तिवारी
सेवानिवृत
वरिष्ठ चिकित्साधिकारी
चम्पावत

हिमालयी क्षेत्र की अद्भुत औषधि कीड़ा-जड़ी (यारसा-गंबू)

यूँ तो हिमालयी क्षेत्र प्राकृतिक वनौषधियों से भरा पडा है,फिर भी कुछ ऐसी औषधियां हैं,जो दुनिया भर में अपने विशिष्ट गुणों के कारण जानी जाती है। ऐसी ही एक दुर्लभ एवं प्राकृतिक गुणों से भरपूर औषधि है'कीडा-जड़ी' जिसे यारसा-गंबू,यारसा-गूंबा,केटरपिलर फंगस के नाम से जाना जाता है। यह औषधि भारत, नेपाल एवं चीन सहित दुनिया के कई देशों में शारीरिक क्षमता को बढ़ाने के उद्देश्य से प्रयोग में लायी जा रही है। आयुष दर्पण को इस औषधीय गुणों से युक्त द्रव्य के रोचक पहलूओं को सामने लाने में नेपाल के आयुर्वेदिक चिकित्सक डॉ.राममणी भंडारी एवं चीन के बाओजी प्रान्त की लिलि एल्वी ने जानकारी भेजी, जिसके हम आभारी हैं।

कीड़ा-जड़ी सामान्य जानकारीः- यह भारत, नेपाल, तिब्बत के उच्च हिमालयी क्षेत्रों में मिलने वाला औषधीय द्रव्य है, जिसका प्रयोग चिर-यौवन को बरकरार रखने हेतु किया जाता है। उच्च हिमालयी क्षेत्रों में रहने वाले स्थानीय लोग इस औषधि की तलाश में बर्फ से ढ़के क्षेत्रों में कठिन परिस्थितियों में जाते हैं। मूलतः यह एक फंगस है ft l sCodyceps sinensis' नाम दिया गया है। यह लेपिडोप्टेरा ऑर्डर के कीट के लार्वा Endoclyta excrescens के उपर परजीवी के रूप में विकसित होता है। तिब्बती लोग इसे 'येरत्सा-गुंबू' के नाम से पुकारते हैं जिसका अर्थ 'समरग्रास विन्टर-वर्म' होता है। परजीवी के रूप में विकसित होने वाला यह फंगस मानसून के आने से पूर्व कीट के नये कूकून से बाहर केटरपिलर लार्वा में प्रवेश करता है। यह लार्वा जाड़ों में भी दिखाई देता है, लेकिन बसन्त ऋतु में यह जीवित नहीं रहता है। इस मशरूम के स्पोंस बरसात के मौसम में बाहर निकलते हैं तथा छोटे जीवन चक्र को पूरा कर आर्द्रता की कमी होने पर मर जाते हैं। यह औषधीय द्रव्य 3000 से 5000 मीटर की उँचाई पर मिलता है। चीन में यह सिचुवान, क्विंगहई,जानशू,यून्नान एवं तिब्बत में पाया जाता है,जबकि नेपाल में हूमला, जूमला, दार्चूला आदि क्षेत्रों में मिलता है। इसी प्रकार भारत में उत्तराखण्ड राज्य के उच्च हिमालयी क्षेत्रों में भी यह पाया जाता है, भूटान भी इसका निर्यात करता है। नेपाल सरकार ने वर्ष 1996 में इसके संग्रहण पर रोक लगा दी थी, जबकि भारत के उत्तराखण्ड राज्य में सरकार द्वारा इसके संग्रहण,उत्पादन एवं निर्यात पर नियंत्रण रखा गया है। इसका प्राप्तिस्थल मौसम के दृष्टिकोण से दूरह है, अतः इसकी तलाश में गये लोग कई बार मौसम की मार के शिकार होकर अपनी जान खतरे में डाल देते हैं। इसे आयात करने वाले देशों में चीन, हाँगकाँग, ताईवान एवं कोरिया प्रमुख हैं। भारत इसका सबसे बडा निर्यातक देश है। 'बायो डायवर्स-कंजर्व' नामक अंतर्राष्ट्रीय जर्नल में प्रकाशित शोध पत्र ने केटरपिलर-फंगस के व्यवसाय को 'फंगस-इकोनॉमी' नाम दिया है तथा इसके व्यापार से उच्च हिमालयी क्षेत्रों के अर्थतंत्र के बदलने की सम्भावना जतायी है।

पिछले तीन-चार वर्षो में केटरपिलर-फंगस की अन्तराष्ट्रीय कीमतों में 350 फीसदी की बढोतरी हुयी है। केवल भारत के उत्तराखण्ड राज्य में ही इसका उत्पादन 1,54,326 हेक्टेयर में 320 से 380 किलो हुआ है, जिसकी स्थानीय कीमत 14 से 18 करोड़ रूपये है तथा अन्तराष्ट्रीय बाजार में इसकी कीमत 360 से 500 करोड़ आँकी गयी है। इसकी सबसे बड़ी मंड़ियाँ शंघाई, बीजिंग, सिंगापुर, टोक्यो, एवं काठमांडू हैं। भूटान ने इसकी बिक्री के लिये प्रतिवर्ष अन्तराष्ट्रीय मेले लगाकर विपणन का एक मॉडल तैयार किया है।

उत्तराखण्ड़ राज्य के उच्च हिमालयी क्षेत्रों में इसके व्यापार से काफी पैसा आया है, लेकिन इसकी पारदर्शी व्यवस्था नहीं होने के कारण विक्रेताओं के पास यह काले धन के रूप में जमा हो रहा है। इस केटरपिलर-फंगस का रंग हल्का पीला, पीले भूरे रंग का होता है, इसके

औषधीय प्रयोग के महत्व के कारण ही चीन में यह 'गोल्डन-ग्रास' के नाम से भी लोकप्रिय है। इसकी कार्मुकता के कारण वहाँ के बाजार में इसकी अत्यधिक माँग है। अन्तराष्ट्रीय बाजार में इसकी बढ़ी कीमत के कारण लोग तस्करी द्वारा चोरी छुपे इसे बाहर बेचते हैं, जो कानूनन अपराध है। चीन में यह 26 प्रजातियों के केटरपिलर से प्राप्त किया जाता है, जिनमें 24 प्रजातियाँ परजीवी कीट की हैं तथा अलग-अलग क्षेत्रों के आधार पर भी इसे फरनेस-ग्रास,यून्नान-ग्रास, स्रब-ग्रास आदि नामों से भी जाना जाता है। औषधीय महत्वः- चीन की औषधीय पुस्तकों में इसे अच्छा रक्तस्तम्भक (खून के स्राव को रोकने वाला), फेफड़ों के ट्यूबरकुलोसिस, खून की कमी आदि रोग जन्य स्थितियों में प्रयोग कराने का निर्देश है। इस फंगस के औषधीय प्रभाव का कारण इसके अन्दर मिलने वाला हारमोन 'मिलेटोनिन' है। यह हारमोन फंगस के पीनयल बॉडी से स्रवित होता है तथा हृदय की अनियंत्रित गति को नियंत्रित करने का काम करता है। इसके अलावा इसमें 'कोड्रिसेपनिन' नामक रसायन एवं अन्य पॉली सेकराइड भी पाये जाते हैं। कोड्रिसेपनिन, ट्यूमर के बनने को रोकता है तथा गुर्दे, मूत्राशय एवं आँतों की कैंसर कोशिकाओं के डी. एन.ए. एवं मेसेन्जर आर.एन.ए.के संश्लेषण को अवरूद्ध कर देता है। चीन में इस केटरपिलर-फंगस को टॉनिक के रूप में छोटे-छोटे बन्डलों में बेचा जाता है, जिसका प्रयोग कर खिलाड़ी अपनी खेलक्षमता को बढ़ाते हैं। आधुनिक शोध से यह ज्ञात हुआ है, कि केटरपिलर फंगस में कोड्रिसेपनिनएसिड 7%, कोड्रिसेपनिन, डी-मेनिटोल, पॉलीसेकराइड, अनसेचुरेटड फेट्टीएसिड -82.2%, न्यूक्लियोसाइडप्रोटीन, विटामीन-'ए', 'बी'- 1, 'बी' -2, 'बी' -6,'बी' -12, जिंक, कॉपर, कार्बोहाईड्रेट -8. 4% आदि पाये जाते हैं। इसकी लोकप्रियता का एक बड़ा कारण इसका कामोत्तेजक प्रभाव होता है। इसे 'हिमालयन-वियाग्रा' या 'हिमालयन- गोल्ड' के नाम से भी जाना-जाने लगा है। Codyceps sinensis पर किये गये रिसर्च से इसके एन्टीमाइक्रोबियल प्रभाव की पुष्टि भी हुई है। इसके प्रयोग से फेफड़ों के संक्रमण,दर्द, सियाटिका एवं कमर दर्द जैसे रोगों में लाभ मिलता है। इसके अलावा यह कोशिकाओं को ऊर्जा प्रदान कर थकान भी मिटाता है। बच्चों में 'शय्यामूत्र' में भी यह लाभकारी है, लीवर पर भी इस केटरपिलर-फंगस के अच्छे प्रभाव देखे गये हैं। इसका नियमित प्रयोग रक्तगत वसा को नियंत्रित करता है। यह अत्यधिक उष्ण होने के बावजूद भी शुष्क न होने के कारण एक अच्छे सप्लीमेंट का काम करता है। हाल के एक शोध के अनुसार इसमें पाये जाने वाले रसायन कोड्रिसेपनिन,एडिनोसिन की तरह ही शरीर में कार्य करता हुआ रक्तस्राव को रोकने का कार्य करता है। चीन स्थित बीजींग मेडिकल विश्वविद्यालय एवं जापान में हुये शोध के अनुसार नपुंसकता से पीड़ित रोगियों में इससे 64% लाभ देखा गया है। चीन में अत्यंत प्राचीन समय से ही इसे सभी रोगों में औषधि के रूप में प्रयोग कराया जाता रहा है। 'केटरपिलरफंगस' में मिलने वाला कोड्रिसेपनिन लिडिग कोशिकाओं में स्टीरॉयडोजेनेसिस को बढ़ाकर पुरूषों की नपुंसकता को दूर करता है।

निष्कर्षः-इन सभी तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि 'कीड़ा-जड़ी' नाम से प्रचलित केटरपिलर-फंगस एक रसायन औषधि के रूप में कार्य करता है। इसे विशेष तरीके से निर्माण कर अन्य हर्बल औषधियों के साथ मिलाकर प्रभाव के आंकलन की दिशा में शोध किये जाने की आवश्यकता है।

❁❁❁❁❁

*साभारः -डॉ.राममणी भंडारी,
काठमांडू, नेपाल/लिलिएल्वी,
XIAN HERB BIOTECH, CHINA

'साइनोसाइटिस' एवं सिरदर्द का योग द्वारा उपचार

'साइनोसाइटिस' एवं सिरदर्द,आयुर्वेद में शिरोरोग के अर्न्तगत आने वाला सामान्य रोग है। 'साइनोसाइटिस' मूलतः श्वसन संस्थान से सम्बंधित रोग है, जो नासिका गुहा पर प्रभाव डालकर सिरदर्द जैसे लक्षणों को उत्पन्न करता है। 'साइनोसाइटिस' के रोगी पूरी दुनिया में मिलते हैं तथा रोगियों के अनुसार इसके लक्षण अलग-अलग हो सकते हैं। शरीर रचना की दृष्टि से 'साइनस' शब्द का अर्थ किसी अंग में स्थित अवकाश या गुहा से सम्बंधित होता है। लेकिन आमतौर पर लोग 'साइनस' के नाम से ही इस बीमारी को जानते हैं। नासिका गुहा में सूजन जिसे 'साइनोसाइटिस' कहा जाता है, इसके निम्न

लक्षण रोगी में दृष्टिगोचर होते हैं:-

* लगातार छींक आना
* नाक से पानी आना
* दोनों नासिका बन्द होना

सिर में भारीपन तथा दर्द बने रहने से होनेवाले 'साइनोसाइटिस' का कारण एलर्जी हो सकता है, जिसके बारे में चर्चा पिछले अंक के लेख 'फूड एलर्जी:सामान्य जानकारी निदान एवं बचाव के उपाय' में दी जा चुकी है।

आधुनिक चिकित्सा में एलर्जी की पहचान कर उपचार एक लम्बी प्रक्रिया है तथा ठीक होने की अनिश्चिता भी बनी रहती है। ऐसा देखा गया है,कि आधुनिक दवाईयाँ केवल तात्कालिक लाभ देती हैं तथा सिर में भारीपन,थकान,नींद आना जैसे साईड-इफेक्ट भी पैदा करती हैं।

योगिक उपचार:- योग में 'साइनोसाइटिस' के उपचार में असयंमित खानपान को ठीक करने पर बल दिया जाता है। रोगियों को संतुलित आहार लेने की सलाह देकर अनावश्यक एवं स्वास्थ्य के लिये अनुपयोगी तत्वों से बचने की सलाह दी जाती है। 'साइनोसाइटिस' के रोगियों को बेड-टी लेने से बचना चाहिये तथा तीक्ष्ण गंध वाले परफ्यूम, बालों के तेल को लगाने से परहेज करना चाहिये। तली-भुनी खाद्य सामग्री का सेवन साइनस के रोगियों की परेशानी को बढ़ा देता है। 'साइनोसाइटिस' के रोगियों को भोजन में एक निश्चित 'डायट-चार्ट' का पालन करना चाहिए।

'साइनोसाइटिस' के रोगियों में नियमित प्राणायाम का अभ्यास लाभकारी प्रभाव दर्शाता है।

प्राणायाम का अभ्यास:-प्राणायाम श्वास की एक विशेष प्रक्रिया है, जिसमें तीन स्थितियाँ होती हैं।

* रेचक-साँस बाहर छोड़ने की स्थिति
* पूरक-साँस अन्दर लेने की स्थिति
* कुम्भक-साँस अन्दर रोकने की स्थिति

'साइनोसाइटिस' के रोगियों को प्राणायाम के अभ्यास में केवल रेचक एवं पूरक का अभ्यास करना चाहिए।

प्राणायाम से पूर्व की तैयारी:-एक शाँत, खुले एवं साफ-सुथरे कमरे में फर्श पर दरी

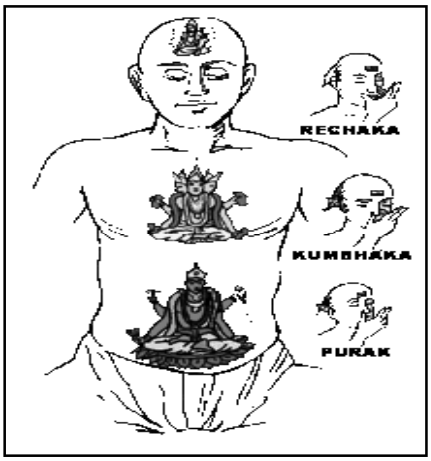

या चादर बिछाकर पद्मासन या सुखासन की स्थिति में बैठ जायें। रीढ़ की हड्डी सिर एवं गर्दन की हड्डी एक सीध में होनी चाहिये। दृष्टि सामने की तरफ आँखों के लेवल पर हो। कंधों को खींचते हुए कलाईयों को घुटनों के उपर स्थित करें।

दोनों हाथों अंगूठे एवं तर्जनी अंगुली आपस में मिलकर एक घेरा बनायें तथा शेष तीन अंगुलियाँ सीधी एवं एक साथ मिली हुयी हो, साँस की गति सामान्य हो।

अभ्यास के क्रम:-

*साँस को दोनों नासिका से धीरे-धीरे बाहर की ओर छोड़ें तथा एक साथ पेट को अन्दर की ओर खीचें, ताकि अन्दर की सारी वायु बाहर निकल जाए।

*साँस छोड़ने के बाद अपनी साँस को कुछ सेकेन्ड यथास्थिति में रखें तथा धीरे-धीरे साँस को अन्दर की ओर लें, जितनी गहरी साँस हो सके लें,साथ ही पेट को बाहर की ओर ढकलते हुए अधिक से अधिक साँस अन्दर लेने का अभ्यास करें,तथा यह प्रक्रिया क्रमिक रूप से बढ़नी चाहिए,न कि अचानक या बहुत तेज हो।

*साँस को गहराई तक अन्दर लेने के बाद कुछ सेकेन्ड का विराम देते हुये पुन:साँस बाहर छोड़नी चाहिए।

नियमित अभ्यास:-इन समस्त क्रियाओं को 10 से 15 बार दोहराना चाहिए (जिसमें साँस अन्दर लेना और बाहर छोड़ना सम्मिलित है।) ध्यान रहे, किसी एक दिन में ही 15 से अधिक बार इसका अभ्यास न किया जाय।

विशेष सावधानी:-जब तक प्राणायाम किया जा रहा हो, तब तक रीढ़ की हड्डी, गर्दन एवं सिर एक सीध में स्थित होना चाहिए,प्राणायाम के अभ्यास के तत्काल बाद थोड़े समय पूर्व की स्थिति में ही बने रहना चाहिए तथा कुछ सेकेन्ड तक साँस की गति सामान्य बनी रहनी चाहिए। धीरे-धीरे शरीर को शिथिल करते हुए सामान्य स्थिति में आना चाहिए। इसके बाद 5 से 10 सेकेन्ड के पश्चात ही आसनों का अभ्यास करना चाहिए।

लाभ:-इस प्राणायाम के नियमित अभ्यास से 'साइनोसाइटिस' के रोगियों में लाभ देखा गया है।

भ्रस्त्रिका प्राणायाम:-भ्रस्त्रिका प्राणायाम के अभ्यास का उपयुक्त समय प्रात:काल नास्ते से पूर्व माना गया है।

इसके अभ्यास से पूर्व मलत्याग आदि कर पेट खाली होना चाहिए,जो इसे संध्या काल में करना चाहते हैं, उन्हें अभ्यास से 3 से 4 घन्टे पूर्व ही भोजन ले लेना चाहिए।

प्राणायाम से पूर्व की तैयारी:-इसे भी अन्य प्राणायाम की भाँति शाँत,खुले,साफ-सुथरे कमरे में नीचे दरी या चादर बिछाकर पद्मासन या सुखासन की स्थिति में बैठकर करना चाहिए तथा रीढ़ की हड्डी,गर्दन एवं सिर एक सीध में स्थित हो,साथ ही हाथों की कलाईयाँ घुटनों के उपर तर्जनी एवं अंगूठे को मिलाते हुए अन्य अंगुलियों को एक सीध में रखकर स्थिर रहना चाहिए।

अभ्यास के क्रम:- प्रथम स्थिति-इस प्राणायाम के अभ्यास में पेट अन्दर एवं बाहर की ओर जल्दी-जल्दी लाना चाहिए। साँस बाहर छोड़ते समय पेट अन्दर की ओर तथा साँस अन्दर की ओर लेते समय पेट बाहर की ओर आना चाहिए। एक बार साँस अन्दर लेना एवं एक बार बाहर छोड़ना मिलकर एक भ्रस्त्रिका प्राणायाम के चक्र को पूरा करता है। द्वितीय स्थिति-भ्रस्त्रिका प्राणायाम के 3 से 4 चक्र को धीरे-धीरे करते हुए बढ़ाना चाहिए एवं तेजी से क्रमिक रूप से इसे किया जाना चाहिए। 5 से 6 बार साँस को क्रम से अन्दर लेकर बाहर छोड़ने की प्रक्रिया को द्वितीय अवस्था में तेजी से पूर्ण करना चाहिए।

तृतीय स्थिति-अब साँस अन्दर लेने ओर बाहर छोड़ने के क्रम को थोड़ा धीमा करते हुए अन्तिम स्थिति को 3 से 4 बार करना चाहिए। इस

स्थिति के बाद बीस सेकेन्ड का विराम लेना आवश्यक है। विश्राम की अवस्था में शरीर सीधा एवं शिथिल हो तथा जिस स्थिति में आराम महसूस हो उसी स्थिति में बने रहना चाहिए। चौथी स्थिति- आवश्यक समय तक विश्राम लेने के पश्चात प्राणायाम की उपरोक्त वर्णित प्रक्रिया के पूरे चक्र का पुनः अभ्यास करना चाहिए। नियमित अभ्यासः-भ्रस्त्रिका प्राणायाम का प्रथम सप्ताह में केवल दो चक्र तथा द्वितीय सप्ताह के बाद 3 से 4 चक्र नियमित अभ्यास किया जाना चाहिए, किसी भी दशा में एक दिन में 4 से अधिक चक्र नहीं किया जाना चाहिए।

<u>लाभः-</u>यह प्राणायाम श्वसन संस्थान की विकृति को दूर करता है,साथ-साथ फेफड़ों एवं नासिकागुहा में आये अवरोध को दूर करता है। यह हृदय रोगों से बचाव में भी कारगर होता है। पाचन तंत्र पर भी इस प्राणायाम का अच्छा प्रभाव पड़ता है। इस प्राणायाम का अभ्यास किसी भी आयु एवं लिंग में कराया जा सकता है।

इसप्रकार प्राणायाम का नियमित अभ्यास एलर्जी के कारण उत्पन्न हुए 'साइनोसाइटिस' के लक्षणों से निजात पाने में कारगर है।

'साइनोसाइटिस' की तरह ही हमारे समाज में सिरदर्द भी एक आम लाक्षणिक बीमारी की स्थिति है। शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसने अपने जीवनकाल में सिरदर्द का अनुभव न किया हो। अमेरिका में काम करने वाले लोगों के बीच सिरदर्द एक आम समस्या है,जिस कारण लोग अपने घरों में छोटी-छोटी बोतलों में दर्द निवारक दवा को रखते हैं तथा बीच-बीच में दर्द से राहत पाने के लिए इसका प्रयोग करते रहते हैं। यद्यपि सिरदर्द के अलग-अलग प्रकार होते हैं, कुछ में दर्द लगाातार बना रहता है तथा कुछ में दिन के एक खास समय दर्द उत्पन्न होता है ।

कुछ लोगों में सिर के आधे हिस्से में दर्द बना रहता है, इसप्रकार के पुराने सिरदर्द को 'माइग्रेन' कहा जाता है। सिरदर्द के विभिन्न कारणों में से कुछ सामान्य कारण निम्न है:- तंत्रिकातंत्र में बाहरी या आन्तरिक तनाव के कारण सिरदर्द उत्पन्न हो सकता है। आयुर्वेद में भी इन सभी को शिरोरोग के अन्तर्गत वर्णित किया गया है। वैसे भी सिर तंत्रिकाओं का केन्द्रीय स्थल है,जिनमें आयी गड़बड़ी सिरदर्द का कारण बन सकती है।इसके अलावा उच्च एवं निम्न रक्तचाप,पेट की समस्या, कब्ज, अजीर्ण, साइनोसाइटिस, दृष्टिदोष, धूम्रपान, तम्बाकू सेवन, अत्यधिक मात्रा में चाय या कॉफी का प्रयोग शराब, उचित मात्रा में नींद न लेना, एन्जायटी,थकान आदि कारणों से भी सिरदर्द उत्पन्न हो सकता है।

सिरदर्द की योगिक चिकित्साः- योग में सिरदर्द का इलाज तीन तथ्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है।

1-तंत्रिका तंत्र पर तनाव डालने वाले कारणों से बचाव

2-संयमित खान-पान

3-कुछ चुनिंदा आसनों,प्राणायाम एवं बन्ध का अभ्यास

सिरदर्द से पीड़ित व्यक्ति को दिनभर में दो कप से अधिक चाय या कॉफी का सेवन नहीं करना चाहिए, इसके अलावा शराब एवं धूम्रपान को तत्काल त्याग देना चाहिए। व्यक्ति को नियमित 6 से 8 घन्टे की नींद लेनी चाहिए। व्यक्ति को तनावमुक्त एवं खुले वातावरण में कार्य करना चाहिए तथा अत्यधिक कार्य के दबाव से उत्पन्न होने वाली स्थिति से बचना चाहिए। भोजन में खट्टे, तले-भुने, मिर्च-मसालेयुक्त भोजन से बचना चाहिए, ये खाद्य पदार्थ 'हाईपरएसिडिटी' उत्पन्न कर सिरदर्द उत्पन्न करते हैं।

सिरदर्द के रोगियों को नियमित कराये जाने वाले आसन,प्राणायाम एवं बंध

* सूर्यनमस्कार
* भुजंगासन
* जालन्धर बंध
* रेचक-पूरक प्राणायाम
* शीतली प्राणायाम
* शवासन

<u>सूर्यनमस्कारः-</u> हिन्दू संस्कृति में 'सूर्य' को शक्ति का स्वरूप मानकर, आराधना करने का विधान है। ऐसे ही 'हठ-योग' में सूर्य के प्रति सम्मान के भाव के साथ की जाने वाली 12 स्थितियाँ होती हैं, जिनसे सम्पूर्ण शरीर का व्यायाम होता है। वेदों में सूर्य की पूजा नित्य करने का विधान निर्देशित है तथा 'आदित्य-हृद्यम' नामक प्राचीन ग्रन्थ में 'सूर्यनमस्कार' का विस्तृत वर्णन किया गया है। रावण से युद्ध करने से पूर्व भगवान श्रीराम द्वारा

'सूर्यनमस्कार' करने का वर्णन रामायण के 'युद्ध-काण्ड' में उल्लेखित है। 'सूर्यनमस्कार' करते हुए सूर्य स्त्रोत का उच्चारण भी किया जाता है।

अभ्यास:-अन्य योग के आसनों की तरह ही 'सूर्यनमस्कार' खाली पेट किया जाता है। भोजन एवं 'सूर्यनमस्कार' के अभ्यास के बीच कम से कम दो घन्टे का अन्तराल आवश्यक है। जहाँ तक हो सके इसे

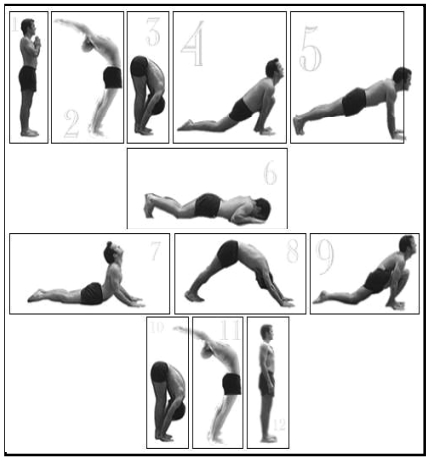

प्रात:काल ही किया जाना चाहिए। 'सूर्यनमस्कार' को फर्श पर चादर या दरी बिछाकर करना चाहिए। कुछ परंपराओं में 'सूर्यनमस्कार' को एक अभ्यास में प्रतिदिन 12 बार कराये जाने का निर्देश है। लेकिन यदि पहली बार इसे किया जा रहा हो तो इसे 3 से 6 नमस्कार प्रतिदिन करते हुए,धीरे-धीरे एक सप्ताह में 12 तक बढ़ाया जाना चाहिए।

'सूर्यनमस्कार' के अभ्यास के उपरान्त शवासन का अभ्यास कर शरीर को आराम देना चाहिए। 'सूर्यनमस्कार' में 8 अलग-अलग स्थितियाँ होती हैं तथा कुल 12 स्थितियों में चार स्थितियाँ 2 बार की जाती है।

हिन्दू संस्कृति के अनुसार सूर्य नमस्कार हमेशा प्रात:पूर्वाभिमुख होकर तथा सायं पश्चिमाभिमुख होकर किये जाने का विधान है। इसकी 12 अलग-अलग स्थितियाँ निम्नानुसार है:-

* प्रणामासन (साँस छोडने की स्थिति) मंत्र: ॐ मित्राय नम:
* हस्तउत्तानासन (साँस लेने की स्थिति) मंत्र: ॐ रवये नम:
* हस्तपादासन (साँस छोड़ने की स्थिति) मंत्र: ॐ सूर्याय नम:
* एकपादप्रसरणासन (साँस लेने की स्थिति)मंत्र: ॐ भानवे नम:
* दण्ड़ासन (साँस छोड़ने की स्थिति) मंत्र: ॐ खगाय नम:
* अष्टांग नमस्कार (यथास्थिति) मंत्र: ॐ पूष्णे नम:
* भुजंगासन (साँस लेने की स्थिति) मंत्र: ॐ हिरण्यगर्भाय नम:
* अधोमुखश्वानासन (साँस छोड़ने की स्थिति) मंत्र: ॐ मरीचये नम:
* अश्वसंचालनासन (साँस लेने की स्थिति) मंत्र: ॐ आदित्याय नम:
* उत्तानासन (साँस छोडने की स्थिति) मंत्र: ॐ सवित्रे नम:
* हस्तउत्तानासन (साँस लेने की स्थिति) मंत्र: ॐ अर्काय नम:
* प्रणामासन मंत्र:ॐ भास्कराय नम:

'सूर्यनमस्कार' को प्रारम्भ करने से पूर्व मंत्र:'ॐ ध्येय: सदा सवित्र मण्डल मध्यवर्ती नारायण सरसिजा सनसन्निविष्ट:! केयूरवान मकरकुण्डलवान किरीटीहारी हिरण्मयवपुर घृतशंख चक्र:!!' का तथा 'सूर्यनमस्कार' के पूर्ण होने पर मंत्र 'आदित्यस्य नमस्कारान् ये कुर्वन्ति दिने दिने!आयु: प्रज्ञा बलम् वीर्यम् तेजस्तेशान् च जायते!!' का उच्चारण किया जाना चाहिए।

*भुजंगासन एवं शवासन का अभ्यास पूर्व के अंक में विस्तार से बताया गया है।

*जालन्धरबंध: फर्श पर पद्मासन या सुखासन की मुद्रा में बैठ जायें तथा रीढ़ की हड्डी, गर्दन एवं सिर को एक स्थिति में रखें, दृष्टि सामने की ओर एक सीध में स्थित हो तथा हथेलियाँ अपनी ओर के घुटनों पर स्थित हो, अब सामान्य साँस लेते हुए निम्नलिखित चरणों का अभ्यास करें:-

सबसे पहले सामान्य साँस लें तथा धीरे-धीरे जितना हो सके उतना आराम से साँस अन्दर लें। अब साँस को रोकते हुए सिर को नीचे की ओर झुकाते हुए, ठुड्डी को सीने से लगायें, सिर को झुकाते समय अनावश्यक तनाव न दें, यदि ठुड्डी सीने से नहीं लग पा रही हो तो जितना हो सके उतना नीचे ले जाने का प्रयास

करें, जब ठुड्डी सीने को छू रही हो तब दोनों कन्धों को थोड़ा उपर उठायें, रीढ़ सीधी हो, साँस रोकते हुए सिर एवं गर्दन को एक सीध में रखें। इस स्थिति में 4 से 8 सेकेण्ड बने रहें, इसप्रकार 'जालन्धरबंध' पूर्ण होता है। अब सिर को धीरे-धीरे उपर की ओर लायें, जब ठुड्डी छाती से दूर जा रही हो तब धीरे-धीरे साँस छोड़ें। जब सिर सीधी स्थिति में आ गया हो, तब साँस पूरी तरह बाहर छोड़ दी जानी चाहिए। दो साँस लेने एवं छोड़ने तक आराम करने के बाद पुनः'जालन्धरबंध' लगाना चाहिए।

<u>लाभः-</u>'जालन्धरबंध' सिरदर्द को तो दूर करता ही है तथा यह कन्धे एवं गर्दन की विकृतियों में भी लाभ दर्शाता है। 'साइनोसाइटिस' से पीड़ित रोगियों में 'जालन्धरबंध' के चमत्कारिक प्रभाव मिलते हैं। इस बंध का अभ्यास किसी भी आयु के व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है।

*रेचक-पूरक प्राणायाम का वर्णन पूर्व में ही किया जा चुका है।

<u>शीतली प्राणायामः</u>-शीतली का अर्थ शीतल प्रभाव से है। इस प्राणायाम के अभ्यास से सम्पूर्ण शरीर को शीतलता का एहसास होता है। इस प्राणायाम में वायु को धीरे-धीरे लगातार मुँह से लेकर दोनों नासिका से धीरे-धीरे लगातार छोड़ा जाता है। इस अभ्यास से सम्पूर्ण शरीर शिथिल एवं तनावमुक्त हो जाता है। इस प्राणायाम के अभ्यास से केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है। इस प्राणायाम को किसी भी आयु वर्ग के व्यक्ति के द्वारा किया जा सकता है, परन्तु शीतकाल में इसके अभ्यास से बचना चाहिए।

प्राणयाम से पूर्व की तैयारीः-पद्मासन या सुखासन में बैठ जायें तथा अपनी जिह्वा को बाहर की ओर दाँतो के बीच से चिपकाते हुए होठों के बीच इस प्रकार से स्थित करें, जिससे एक अवकाश बन जाये तथा इससे होकर वायु प्रवाहित हो सके। आँखों को बन्द कर शरीर को तनावमुक्त कर दें।

अभ्यास के क्रमः-साँस को जिह्वा के स्पर्श द्वारा होठों के मध्य से लें,जितना अधिक हो सके उतना

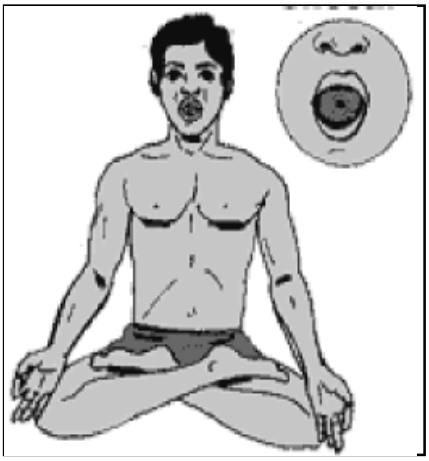

साँस अन्दर लें जब साँस लेने की क्रिया पूर्ण हो जाय तब साँस दोनों नासिका से लगातार धीरे-धीरे बाहर छोड़ें, जब साँस पूरी तरह बाहर आ जाय तब फिर मुँह से दाँतों के मध्य जिह्वा के स्पर्श द्वारा पुनः लगातार धीरे-धीरे साँस अन्दर लें तथा नासिका से धीरे-धीरे साँस लगातार बाहर छोड़ें। इसप्रकार एक बार साँस अन्दर लेना तथा एक बार छोड़ना मिलाकर एक चक्र पूर्ण करें, इसप्रकार दस चक्र का अभ्यास करें। इस प्राणायाम के दस चक्र अभ्यास के बाद तीस सेकेण्ड का विश्राम दें। विश्राम की स्थिति में अपने मुँह को बन्द रखकर सामान्य साँस लें। इस प्रकार इस प्राणायाम के अभ्यास के कारण शरीर में आयी शीतलता को महसूस करें। शीतली प्राणायाम के अभ्यास से मुँह, गले, सिर एवं सम्पूर्ण शरीर में शीतलता व्याप्त हो जाती है। विश्राम के उपरान्त बताये गये अनुसार पुनः दस चक्रों का अभ्यास करें।

<u>नियमित अभ्यासः-</u> बीस से तीस चक्र प्रतिदिन तथा एक बार में दस अभ्यास करें।

<u>लाभः-</u> शीतली प्राणायाम नाड़ियों को तनाव मुक्त एवं शीतलता प्रदान करता है, जिसकारण उच्चरक्तचाप, हाइपरएसिडिटी, एन्जाइटी आदि में यह अत्यंत लाभकारी प्रभाव दर्शाता है। ऐसा कहा गया है, कि यदि आप भूख एवं प्यास से परेशान हों और आपके पास खाने-पीने के लिए कुछ उपलब्ध न हो तो आप सिर्फ शीतली प्राणायाम का अभ्यास करें,इससे भूख एवं प्यास का एहसास भी क्षणिक रूप से कम हो जाता है। कुछ अभ्यासियों को शीतली प्राणायाम के अभ्यास के उपरान्त ठंड के कारण गले में दर्द की शिकायत पैदा होती है। ऐसे में अभ्यास के बाद गुनगुने पानी से गरारा कर लेना चाहिए।

निष्कर्षः-साइनोसाइटिस एवं सिरदर्द जैसी स्थितियों में उचित खान-पान,तनावमुक्त दिनचर्या,योग के आसनों एवं प्राणायाम का अभ्यास बेहद फायदेमन्द है। हाल में किये गये शोध भी इस बात की पुष्टि करते हैं।

बुखार में कैसा हो खान-पान

अक्सर हम बुखार को हल्के में लेते हैं तथा स्वयं के द्वारा कुछ दवायें खरीदकर इससे मुक्ति पाना चाहते हैं, जबकि यह ठीक नही है। बुखार हमारे शरीर में जीवाणुओं या विषाणुओं की स्वाभाविक प्रतिक्रिया के फलस्वरूप मुक्त रसायनों के कारण होने वाली ताप वृद्धि से उत्पन्न होता है। केवल ताप को कम करने के लिए दवाओं का प्रयोग करना रोग में उत्पन्न होने वाले इस लक्षण की चिकित्सा मात्र है, रोग की चिकित्सा नहीं।

इस लेख में इन्हीं पहलूओं को स्पष्ट करते हुए उचित आहार के महत्व पर प्रकाश डाला गया है।

बारिश के मौसम में संक्रमण एक आम बीमारी के रूप में सामने आता है। संक्रमण के मुख्य लक्षण के रूप में शरीर का तापक्रम बढ़ता है, जिससे ज्वर या आम बोलचाल की भाषा में बुखार नाम दिया जाता है। शरीर के तापक्रम बढ़ोत्तरी का कारण आन्तरिक एवं बाह्य होता है।

आन्तरिक कारण:-शरीर में एन्टीबॉडी एवं एन्टीजन के बीच की प्रतिक्रिया, मेलिगनेन्सी, ग्राफ्ट रिजेक्शन आदि भी बुखार उत्पन्न करते हैं।

<u>बाह्य कारण:-</u> इनमें जीवाणु,फंगस एवं विषाणु का संक्रमण आता है।

<u>बुखार कितने प्रकार का होता है?</u>

*थोड़े समय रहने वाला बुखार-जैसे: जुखाम, टॉंसिलाइटिस एवं इनफ्लुएन्जा आदि में आने वाला बुखार

* लम्बे समय से लगातार रहने वाला बुखार-जैसे:ट्यूबरकुलोसिस

* रूक-रूक कर आने वाले बुखार-जैसे:मलेरिया। बुखार की आधुनिक दवाईयाँ शरीर में प्रोस्टाग्लेंन्डिन के संश्लेषण को कम कर देती हैं।

बुखार की स्थिति में शरीर में निम्नलिखित परिवर्तन दिखायी देते है:-

*प्रत्येक डिग्री सेलसियस तापक्रम में वृद्धि शरीर की चयापचयता में 13% की बढ़ोतरी लाता है,जिसे प्रति फारनहाइट 7% की वृद्धि माना जाता है।

* बुखार आने पर,शरीर के अन्दर जमा होनेवाला ग्लायकोजन कम होकर एडीपोज उत्तकों के संग्रहण को कम कर देता है।

* बुखार में प्रोटीन का अपचय होता है, जिससे गुर्दों पर अतिरिक्त भार पड़ता है।

* बुखार की स्थिति में शरीर से जल का क्षरण बढ़ने के कारण रोगी को अधिक पसीना आता है।

* बुखार के कारण शरीर से सोडियम एवं पोटेशियम का उत्सर्जन बढ़ जाता है।

<u>बुखार की स्थिति में हमें कैसा आहार लेना चाहिए?</u>

आमतौर पर हमारे मन में बुखार आने पर,खाने और न खाने सम्बंधी मिथक होते हैं। जिसे हमें सही रूप से जानना एवं समझना आवश्यक है। निम्नलिखित तथ्यों से हम इसे और अधिक स्पष्ट रूप से जान सकते हैं।

ऊर्जा:- शरीर के तापक्रम में वृद्धि के साथ ही शरीर की ऊर्जा की आवश्यकता भी बढ़ जाती है तथा उत्तकों के नष्ट हो जाने की प्रवृति भी साथ-साथ बढ़ती है। बेचैनी की स्थिति में भी शरीर को ऊर्जा की आवश्यकता बढ़ जाती है। अत: रोगी में प्रारंभिक स्थिति में 600 से 1200 किलो कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता होती है जिसे बाद में जितना अधिक

हो बढ़ाना चाहिए।

प्रोटीनः- बुखार आने पर एक व्यस्क व्यक्ति को 100 ग्राम प्रोटीन की मात्रा बुखार के बने रहने तक लेनी चाहिए। प्रोटीन शरीर में ऊर्जा की अतिरिक्त आवश्यकता को पूरा करता है। उच्च प्रोटीनयुक्त पेय पदार्थों के सेवन से भी ऊर्जा की पूर्ति होती है।

कार्बोहाईड्रेटः-बुखार की स्थिति में शरीर में ग्लायकोजन का जमाव कम होने लगता है अतः कार्बोहाईड्रेट की अतिरिक्त मात्रा आवश्यक होती है। वैसा ग्लूकोज जो कम मीठा हो तथा शरीर में आसनी से अवशोषित हो जाये प्रयोग कराना चाहिए।

फैट्ः-बुखार में सही ढंग से फैट् का उपयोग ऊर्जा की मात्रा की पूर्ति करता है,परन्तु तले-भुने पदार्थो का सेवन नुकसान कर सकता है।

मिनरल्सः-सोडियम क्लोराइड की उचित मात्रा को सूप या भोजन से लेकर पूरा किया जा सकता है। फलों के रस एवं दूध मिनरल्स के अच्छे स्रोत माने जाते हैं।

विटामिनः-आमतौर पर बुखार में विटामिन-'ए',एस्कोरबिक एसिड की आवश्यकता बढ़ जाती है तथा जैसे-जैसे ऊर्जा की आवश्यकता बढ़ती है उसी अनुरूप में विटामिन-'बी' कॉम्पलेक्स की आवश्यकता बढ़ती जाती है। एन्टीबॉयोटिक एवं अन्य आधुनिक दवायें आँतों में स्थित जीवाणु द्वारा विटामिन-'बी' काम्पलेक्स के संश्लेषण को प्रभाावित करती हैं अतः आधुनिक चिकित्सक इन दवाओं के साथ-साथ विटामिन सप्लीमेंट लेने की सलाह देते हैं।

द्रव्यः-बुखार में पसीने के रूप में जलीयांश की कमी होती है तथा अधिक पेशाब होने से दूषित रसायन भी शरीर से बाहर निकलते हैं, अतः अतिरिक्त जलीयांश की कमी को अतिरिक्त द्रव्य लेकर पूरा किया जा सकता है

प्रतिदिन लगभग 2500 मिली से 5000 मिली तक जलीय द्रव्य फलों के रस,उबले पानी,सूप आदि के रूप में लिया जाना चाहिए। बुखार में ब्लेन्ड्,अच्छी तरह पचने वाला हल्का भोजन लेना चाहिए। भोजन नर्म तथा अच्छी तरह पका हो तो अच्छा! प्रारम्भ में तरल पदार्थो का सेवन कराना चाहिए। परन्तु बाद में सामान्य हल्का भोजन देना चाहिए। भोजन थोड़ी मात्रा में 2 से 3 घन्टे के अन्तर पर देना चाहिए जिससे शरीर को उचित मात्रा में ऊर्जा की पूर्ति हो सके तथा पाचन तंत्र भी अच्छी तरह से काम करे। कई बार शीघ्र उत्पन्न ज्वर में भूख बहुत कम हो जाता है अतः थोड़ी-थोड़ी मात्रा में अन्तराल पर नर्म एवं तरल भोजन दिया जाना चाहिए।

संक्रमणजन्य बुखार में दिया जाने वाला आहारः-

***टायफायडः-**यह एक संक्रामक प्रकार का रोग है,जिसमें अचानक थोड़े समय का बुखार आता है। यह Salmonella typhi के संक्रमण से उत्पन्न होता है। यह रोगी के मल एवं मूत्र के माध्यम से फैलता है तथा कई बार इसके संवाहक इसे फैलाते हैं। संक्रमित रोगी के मल-मूत्र से पीने के पानी,दूध या भोज्य पदार्थ के प्रदूषित होने या संवाहक (कैरियर) द्वारा या मक्खियों द्वारा यह संक्रमण होने से फैलता है। यह रोग छोटी आँत से शुरू होता है जहाँ आँतों की दीवार से जीवाणु चिपक जाते हैं एवं इसके उत्तकीय स्तर को भेदते हुये आँतों की मिजेन्ट्रिक लिम्फनोड में प्रवेश कर वहाँ से खून में चले जाते हैं,यहाँ इनका सामना एन्टीबॉडिज से होता है जिनसे ये टूटकर इन्डोटोक्सिन जैसे रसायन मुक्त करते हैं जिनके कारण रोगी में बुखार आता है। कुछ जीवाणु रक्त से लीवर में पहुँच जाते है तथा पित्त की थैली एवं नली से होते हुए आँत में पहुँचकर दुबारा संक्रमण उत्पन्न करते हैं,जिससे रोगी में अतिसार होता है। कुछ रोगियों में कुछ सप्ताह तक जीवाणु का उत्सर्जन होता रहता है तथा कुछ संवाहक बन जाते हैं। इस रोग में आँतों में लगातार सूजन बनी रहती है तथा आँतों में घाव भी बन जाते है जिससे रक्त का स्राव होने लगता है। ऐसे रोगियों में स्पीलिन (तिल्ली) भी बढ़ जाती है। आँतों में लिम्फ उत्तकों के 'पेयर्स -पैच' (खासकर इलियम) इस जीवाणु के सुरक्षित पनाहगाह हैं। रोगी अतिसार, कब्ज एवं तीव्र उदरशूल जैसे लक्षण बतलाता है। पोषक तत्वों का आन्त्र से अवशोषण कम हो जाने के कारण

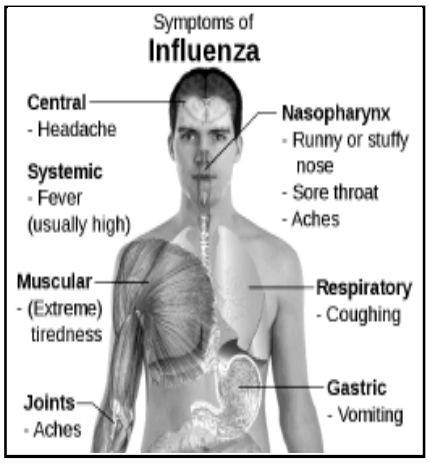

रोगी सिरदर्द एवं भूख न लगने जैसे लक्षण बतलाता है।

टायफायड के संक्रमण में कैसा हो भोजन:-उच्च कैलोरी,उच्च प्रोटीन,उच्च कार्बोहाइड्रेट निम्न फैट्,पर्याप्त तरल पदार्थ,कम रेशेदार एवं ब्लेन्ड्डायट् टायफायड के संक्रमण के दौरान रोगी को दिया जाना चाहिए। बुखार में सामान्य रूप से दिये जाने वाले भोजन को यहाँ भी दिया जाना चाहिए। सर्वप्रथम फ्ल्यूडडायट देते हुये फुल एवं सॉफ्ट्डायट दिया जाना चाहिए। तरल आहार पर रोगी की उच्च कैलोरी एवं उच्च प्रोटीन की आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो पाती, अत: जैसे-जैसे रोगी में सुधार आता है वैसे-वैसे सॉफ्टडायट देना चाहिए।

क्या लें?:-फलों के रस, नारियल पानी, बारली, उबला पानी,दूध, मिल्क-शेक, यदि अतिसार न हो तो कस्टर्ड, पतली दाल, दही, उबली सब्जियाँ, उबले अन्डे आदि रोगी को दिया जाना चाहिए। चावल, रोटी, उबला आलू भी रोगी के लिए उपयोगी होता है।

क्या न लें?:-घी, मक्खन, लालमिर्च, पेस्ट्री, तली-भुनी खाद्य सामग्री, वेजिटेबलऑयल आदि के प्रयोग से बचना चाहिए। आन्त्र में सूजन होने के कारण इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए की किसी उद्दीपक रेशेदार, मसालेदार खाद्य पदार्थ का सेवन न हो।

इनफ्लूएंजा:-यह भी थोड़े ही समय में उत्पन्न होने वाला संक्रमण है। यह एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में विषाणु के संपर्कजन्य संक्रमण से फैलता है।

संक्रमित व्यक्ति के द्वारा खाँसने या छींकने से विषाणु 'ड्राप्लेट्स' के रूप में नजदीक के स्वस्थ व्यक्ति को साँस के माध्यम से संक्रमित कर देते हैं। इस रोग के संक्रमण पश्चात लक्षणों के आने में लगभग दो दिन का समय लगता है,कभी-कभी यह समय 1 से 7 दिन तक हो सकता है। रोगी को अचानक सिरदर्द,हाथ-पाँवों में दर्द, जकड़न, ठंड एवं कम्पन के साथ बुखार आना आदि इस रोग के लक्षण हैं। रोगी को सूखी खाँसी, बार-बार छींक आना तथा गले में संक्रमण जैसे लक्षण भी मिलते हैं। बुखार लगभग पाँच दिनों तक बना रहता है, पाँच दिनों के बाद भी हल्का बुखार रहता है तथा बुखार के बने रहने के साथ फेफड़ों से सम्बंधित लक्षण जैसे: न्यूमोनिया, ब्रोंकाइटिस आदि उपद्रव उत्पन्न होते हैं। इनफ्लूएंजा के रोगियों में आहार व्यवस्था सामान्य बुखार जैसी ही होनी चाहिए।

ट्यूबरकुलोसिस:-यह एक संक्रामक रोग है जो Bacillus Mycobaterium tuberculosis के संक्रमण से उत्पन्न होता है। इससे मूल रूप से फेफड़े अधिक प्रभावित होते हैं, साथ ही यह शरीर के अन्य हिस्सों जैसे:Lymph nodes, गुर्दे एवं कहीं भी प्रभाव डाल सकता है।

फेफड़ों के ट्यूबरकुलोसिस में उत्तकों का क्षय, थकान, खाँसी-बलगम के साथ शाम को हल्का बुखार,हथेलियों एवं तलवों में पसीना आना जैसे लक्षण मिलते हैं। तत्काल हुए संक्रमण में न्यूमोनिया, उच्चतापक्रमयुक्त बुखार आदि जैसे लक्षण मिलते हैं। जैसे-जैसे बीमारी बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे भूख की कमी,वजन कम होना, लगातार खाँसी आना, थकान, कमजोरी, सीने में दर्द, रात में पसीना आना जैसे लक्षण भी मिलते हैं। यदि फेफड़ों की रक्त नलिका फट गयी हो तो खाँसने पर बलगम के साथ मिश्रित खून भी आता है तथा इसप्रकार

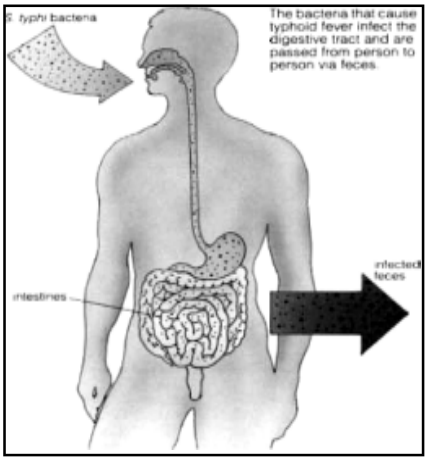

जीवाणु खून के माध्यम से शरीर के किसी भी हिस्से में पहुँच सकते हैं, जिससे संक्रमण की द्वितीय अवस्था प्रारम्भ हो जाती है। यदि फेफड़ों या अन्य महत्वपूर्ण अंगों को भारी नुकसान हो तो रोगी की मृत्यु भी सम्भव है। इस रोग में शरीर के उत्तकों में स्थित प्रोटीन की अपचय प्रक्रिया बढ़ जाती है तथा अत्यधिक पसीना आने के कारण शरीर में जलीयांश, सोडियम क्लोराइड एवं पोटेशियम क्लोराइड की भी कमी हो जाती है।

ट्यूबरकुलोसिस के रोगियों में इलाज के दौरान आहार पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। निम्नलिखित आहार से सम्बंधित तथ्यों पर ध्यान देकर रोगी की आहार व्यवस्था निर्धारित की जानी चाहिए।

ऊर्जा:-ट्यूबरकुलोसिस में अन्य बुखार की तरह तीव्रता नहीं होने से उपापचय दर अधिक नहीं बढ़ती है, जिस कारण 2500 से 3000 कैलोरी ऊर्जा लेने मात्र से रोगी का वजन नियंत्रित रहता है। अत: रोगियों में उच्च कैलोरी युक्त आहार दिया जाना चाहिए।

प्रोटीन:-ट्यूबरकुलोसिस के रोगियों में सामान्य से प्रोटीन की अधिक मात्रा आवश्यक होती है,क्योंकि रोग की बढ़ी हुयी अवस्था में रोगी के सीरम एल्ब्यूमिन का स्तर कम हो जाता है। अत: प्रतिदिन 80 से 120 ग्राम प्रोटीन का सेवन किया जाना चाहिए।

मिनरल्स:-ट्यूबरकुलोसिस के रोगियों में कैलशियम आवश्यक तत्व है, जो घाव को भरने में मद्दगार होता है अत: कम से कम नियमित रूप से एक लीटर दूध का सेवन रोगी के लिए आवश्यक है। यदि रोगी को खाँसने में बलगम के साथ खून आ रहा हो तो अतिरिक्त आयरन की भी आवश्यकता होती है। इसके अलावा कैलशियम,आयरन एवं फास्फोरस जैसे तत्व कोशिकाओं के पुर्ननिर्माण में सहयोगी होते है।

विटामिन:-ट्यूबरकुलोसिस के रोगियों में विटामिन-ए का उपापचय प्रभावित होता है। केरोटीन का विटामिन-'ए' में परिर्वतन बाधित होने के कारण रोगी के आहार में विटामिन-'ए' की मात्रा का विशेष ध्यान रखा जाना आवश्यक है। अत: रोगियों में साप्ताहिक रूप से आहार में विटामिन-'ए' के सप्लीमेंट की आवश्यकता होती है। ट्यूबरकुलोसिस के रोगियों में एस्कोरबिक एसिड की कमी भी देखी जाती है अत: संतरे का जूस या सिन्थेटिक एस्कोरबिक एसिड दिया जाना चाहिए,क्योंकि विटामिन-'सी' भी कोशिकाओं के पुर्ननिर्माण के लिए एक आवश्यक तत्व है।

ट्यूबरकुलोसिस की आधुनिक चिकित्सा में दी जानेवाली दवा 'आइसोनियाजाइड', पाइरोडोक्सीन को पाइरीडोक्सल फॉस्फेट में बदलने से रोकता है, पाइरीडोक्सल फॉस्फेट एक सहायक एन्जाइम के रूप में काम करता है जो ग्लूटामिक अम्ल के निर्माण में सहयोगी होता है। ग्लूटामिक अम्ल एक मात्र ऐसा एमिनो-एसिड है, जिसका उपापचय मस्तिष्क में होता है, अत: 'आइसोनियाजाइड' के कारण पायरोडोक्सील फॉस्फेट का निर्माण न होने से ग्लूटामिक अम्ल का उपयोग कम हो जाता है तथा न्यूराइटिस जैसी स्थिति पैदा हो जाती है। अत: ट्युबरकुलोसिस के के रोगियों में इस दवा के साइड-इफेक्ट को दूर करने के लिए प्रतिदिन 50 से 100 मिलीग्राम की मात्रा में पाइरीडॉक्सीन लेने की सलाह दी जाती है।

अत: ट्यूबरकुलोसिस के रोगियों में उच्च ऊर्जा,उच्च प्रोटीन,उच्च विटामिन,मिनरल,तरल एवं नर्म आहार लेने की सलाह दी जाती है। कुछ रोगियों में आराम से पच जाने वाला आहार देना ही उचित होता है। चूँकि रोगी को खाने की इच्छा नहीं होती है अत: रोगी के पसन्द-नापसन्द का भी ख्याल रखना चाहिए।

निष्कर्ष:- इसप्रकार हमने देखा कि बुखार विभिन्न रोगों में एक महत्वपूर्ण लक्षण है तथा यह जीवाणुओं के प्रति शरीर की एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया के रूप में सामने आता है। अत: उचित आहार व्यवस्था एवं सम्बंधित रोग की चिकित्सा चिकित्सकीय परामर्श से लेना आवश्यक है।

होम्योपैथी: दवाओं का चुनाव हो कैसे?

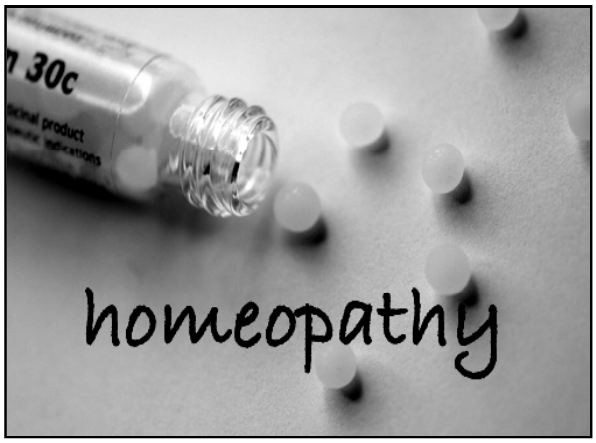

किसी भी रोग की चिकित्सा में चिकित्सा पद्धति एवं औषधि का सही चुनाव एक महत्वपूर्ण पहलू होता है। कई बार रोगी सर्जीकल इमरजेन्सी की अवस्था में भी औषधि उपचार लेता रहता है, जिससे रोगी की स्थिति गम्भीर होने का खतरा बना रहता है। इसी प्रकार रोगी की स्थिति का सही आंकलन न हो पाने के कारण रोगी कई बार अनावश्यक रूप से दवाओं का सेवन करता रहता है तथा दवाओं के कारण ही कई बीमारियों से घिर जाता है। इस लेख में इन्हीं तथ्यों को स्पष्ट करने के साथ ही होम्योपैथिक दवाओं के उचित चुनाव को बताया गया है।

एक पुरानी कहावत के 'अनुसार' थोड़ी मात्रा में लिया गया जहर भी दवा का काम करता है,जबकि अधिक मात्रा में ली गयी दवा जहर का काम कर सकती है। भोजन एवं दवाई में फर्क सिर्फ इतना है,कि भोजन कुछ समय के लिए थोड़ा अधिक लेने पर भी उतना नुकसान उत्पन्न नहीं करता तथा कुछ निश्चित समय बाद शरीर से बाहर पाचन के उपरान्त मल के रूप में निकाल दिया जाता है। जबकि दवा यदि मात्रा से अधिक ली जाये तो नुकसान दायक प्रभाव दर्शाती है। भोजन के रूप में निश्चित मात्रा में लिए गये पोषक तत्व शरीर की क्रियाशीलता पर सकारात्मक प्रभाव डालते हैं,जबकि दवाईयाँ सामान्य या अधिक मात्रा में लिये जाने पर शरीर के स्वास्थ्य को किसी न किसी रूप में प्रभावित करती हैं। अल्प मात्रा में भी दवायें शरीर के स्वास्थ्य को परिवर्तित कर देती हैं,तो

अधिक दवाओं का प्रयोग निश्चित रूप से शरीर में नुकसानदायक प्रभाव दर्शाता है। इसीप्रकार आधुनिक दवायें यदि लम्बे समय तक अधिक मात्रा में ली जायें तो नुकसानदायक प्रभाव पड़ना तो तय ही है। हर रोगी, जो चिकित्सक के पास परामर्श के लिये पहुँचता है उसे औषधि की आवश्यकता हो यह आवश्यक नहीं। हाँ कुछ रोगियों में दवा नितान्त आवश्यक होती है। वैसे रोगी जिनमें पुरानी बीमारी हो तथा रोगी कई दिनों से दवाओं का सेवन कर रहा हो या कोई ऐसी बीमारी हो जिसमें शल्य चिकित्सा आवश्यक न हो ऐसे रोगियों में होम्योपैथी एक बेहतर विकल्प होता है। कई बार रोगी रोग उत्पन्न होने से पूर्व की अवस्था में कुछ लक्षणों के साथ चिकित्सक के पास आता है,उस वक्त चिकित्सक पूर्ण लक्षणों के व्यक्त न हो पाने के कारण बीमारी को पूरी तरह पहचान पाने में असफल होकर सही दवा का प्रयोग नहीं करा पाता है,जिससे कई बार गम्भीर रोग भी सही चिकित्सा पाने से वंचित रह जाता है। भोजन एवं रहन-सहन के नियमों में थोड़ा बहुत परिर्वतन कर भी कई बार रोगों को बगैर दवा के दूर किया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर किसी व्यक्ति को रात्रिजागरण एवं लगातार कमप्यूटर या टेलिविजन के सामने देर तक बैठने से भी सिरदर्द उत्पन्न हो सकता है। ऐसी स्थिति में रोगी को दवा की आवश्यकता नहीं पड़ती है,बल्कि रात की अच्छी नींद सिरदर्द को दूर कर देती है। इसीप्रकार यदि मात्रा से अधिक भोजन लिया जाये तो अजीर्ण के लक्षण उत्पन्न होते हैं,जिसे बिना दवा के हल्के,मिर्च-मसाले रहित भोजन के सेवन एवं शरीर को आराम देकर दूर किया जा सकता है।

विष भी शरीर के जीवित उत्तकों में प्रवेश कर घातक प्रभाव दर्शाता है,अतः इसके प्रभाव को मिटाने के लिये एन्टीडोट दवाओं का प्रयोग किया जाता है,तथा अन्य उपायों से इसे बाहर निकालने का प्रयास किया जाता है। दवाओं के लम्बे समय तक दुष्प्रभाव को क्रॉनिक रोग के रूप में जाना जाता है तथा यह देखा गया है कि अच्छे आहार-विहार के प्रभाव से शरीर में विष के प्रभाव को बाहर निकालकर दूर किया जा सकता है।

ओरलकंट्रासेप्टिव दवाओं के प्रयोग से उत्पन्न होने वाले हाईपरटेंशन एवं मोटापा जैसे रोगों को इन दवाओं के प्रयोग को बन्द कर रोका जा सकता है। इसीप्रकार रोलफिया सरपेन्टाईना का एन्टीहाइपरटेनसिव दवा के रूप में लम्बे समय तक प्रयोग से आत्महत्या जैसी सोच की प्रवृति उत्पन्न होती है। इसीप्रकार दर्दनिवारक दवा का लम्बे समय तक प्रयोग हाइपरएसिडिटी जैसे लक्षणों को उत्पन्न करता है। अतः इन दवाओं के प्रयोग को बन्द करने मात्र से इनके साइडइफैक्ट दूर हो जाते हैं। कुछ अन्य अवस्थाओं में भी दवाओं के प्रयोग के बगैर रोगी ठीक किये जाते हैं, जैसेः शरीर में किसी आवश्यक तत्व की लम्बे समय तक कमी एवं उसी आवश्यक तत्व की लम्बे समय तक अधिकता, दोनों ही स्थितियाँ रोगों का कारण बनती हैं तथा उपरोक्त आवश्यक तत्व की कमी या अधि कता को भोजन आदि के माध्यम से पूर्णकर रोग को ठीक किया जा सकता है। होम्योपैथी के अनुसार हमारे शरीर की आंतरिक शक्ति (वाइटलफोर्स) 'मियास्म' के प्रभाव में होती है तथा जब यह अच्छे भोजन या अन्य सामान्य तरीकों से ठीक नहीं हो पाती,ऐसी स्थिति में 'मियास्म' के विपरीत औषधि के प्रयोग का विधान है। होम्योपैथिक दवाओं का प्रभाव किसी भी तात्कालिक रोग की स्थिति में कुछ घन्टों में ही प्रारम्भ हो जाता है,जबकि पुरानी बीमारियों में प्रभाव मिलने में कुछ दिनों से सप्ताह तक का समय लग सकता है,और इस दौरान रोगी में रोग के लक्षणों में बढ़ोतरी देखी जाती है, लेकिन सुखद पहलू यह है, कि रोगी अच्छा महसूस करता है। इससे यह इंगित होता है, कि दवायें रोग के समान लक्षण उत्पन्न कर रहीं है, एवं प्राकृतिक रूप से उन लक्षणों पर हावी होकर रोग को ठीक कर देती हैं। होम्योपैथिक दवाओं के प्रयोग के बाद उत्पन्न इस प्रकार के लक्षण रोग के कारण उत्पन्न न होकर रोगों के लक्षणों को अधिक प्रभावी ढ़ंग से हावी होकर दूर कर देते हैं। इसीप्रकार कुछ अन्य स्थितियों में दवाईयों की भूमिका नगण्य होती है जैसे:आन्त्रअवरोध,आँतों का फट जाना, एपेन्डिक्स में सूजन, हर्निया, टायफायड की बढ़ी स्थिति, जन्मजात विकृतियाँ, इन स्थितियों में शल्य-चिकित्सा ही एक उपाय है। ऐसी स्थितियों में प्रारम्भिक अवस्था में होम्योपैथिक दवायें कनजरवेटिव उपाय के रूप में काम करती हैं।

अतः वर्तमान समय में चिकित्सा हेतु सामान्य बीमारियों की संख्या अधिक है, एवं होम्योपैथिक चिकित्सा इनके उपचार के लिये उपयुक्त है। सभी चिकित्सकों के लिये जानना अत्यंत आवश्यक है, किस रोगी को दवाओं द्वारा ठीक किया जाय तथा किसे केवल काउँसिलिंग द्वारा!

●●●●●

*डॉ. हिमांशु शेखर 'रथ'
एम.डी.(होम्यो.)
पी.एच.सी.,नारायणनगर, काशीपुर
(उधमसिंहनगर)

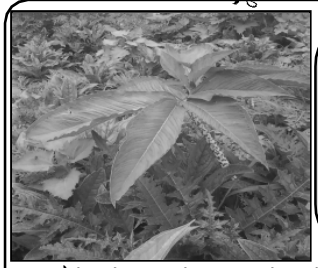

अपने आस पास के औषधीय पौधे को पहचानें।

इस पौधे को पहचाने एवं नीचे दिये गये फार्म को भरकर भेजें।

पौधे का नाम : .....(हिन्दी में)
वानस्पतिक नाम : .....
क्षेत्रीय नाम : .....
कुल : .....
औषधीय प्रयोग .....

सबसे पहले सही उत्तर भेजने वाले व्यक्ति को पुरस्कृत किया जायेगा तथा उनका नाम फोटो सहित आगामी अंक में प्रकाशित किया जायेगा।

पिछले अंक में प्रकाशित औषधीय पौधे की पहचान करने वाले पाठक

नामः
आनन्द पाण्डेय
पताः
सत्यम कम्प्यूटर्स
टकाना रोड,
पिथौरागढ़-262501
उत्तराखण्ड,

पौधे का नामः कुटज
वानस्पतिक नामः **Holarrhena antidysenterica**
क्षेत्रीय नामः कुटज, वत्सक, कलिंग
कुल- Apocynaceae
औषधीय प्रयोगः अतिसार एवं ग्रहणी चिकित्सा की औषधि, उदर रोग में हितकारी।

सरकार जनता के द्वार
गांव-गांव अटल चौपाल

10 जून, 2011 से प्रारम्भ

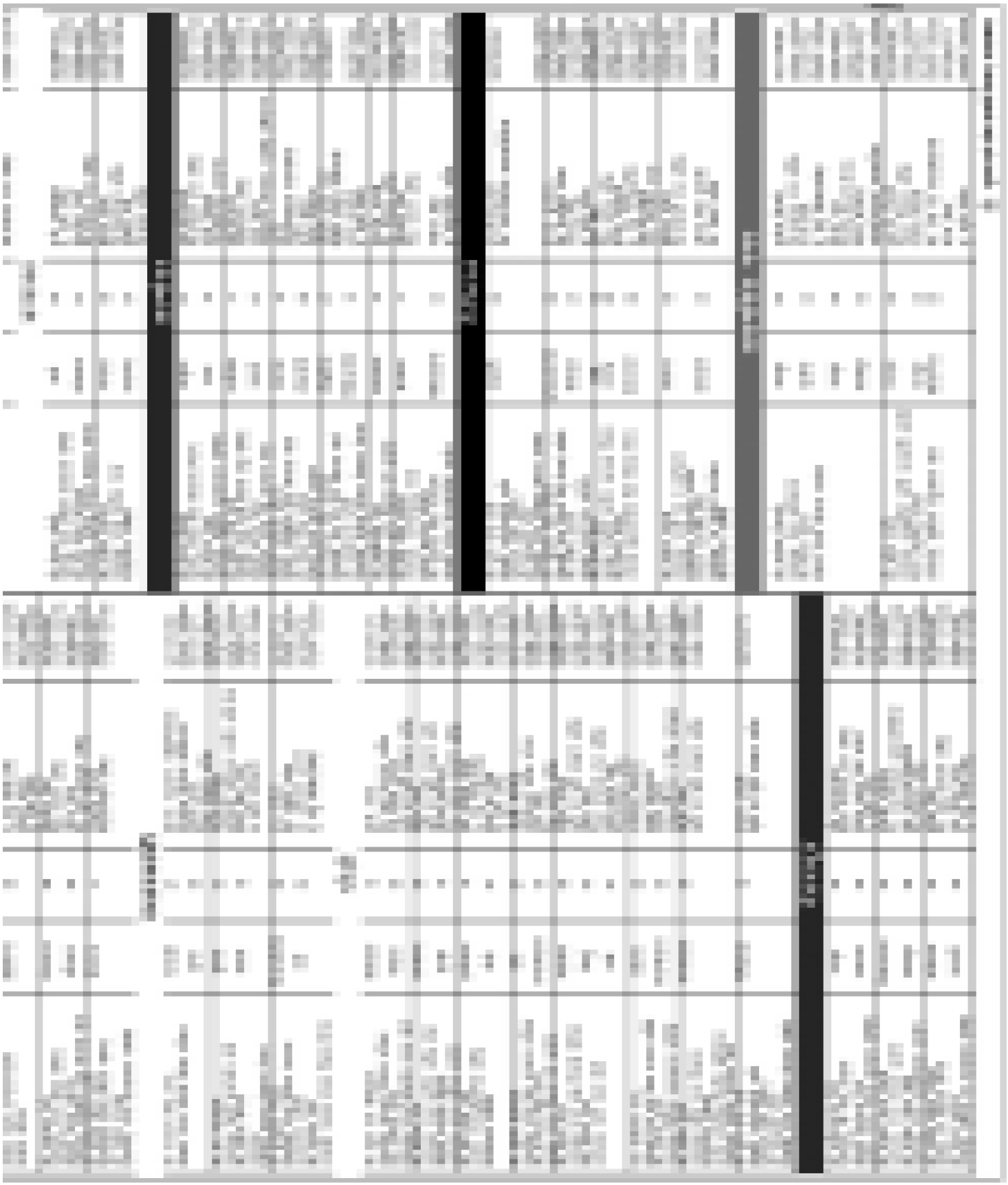

'क्षार-सूत्र'

आयुर्वेद की अनेक चिकित्सा विधायें पुरातन काल से ही प्रभावी एवं निरापद रही हैं। ये विधायें वर्षो से आर्चायों,मनीषियों एवं वैद्यों के अनुभवों से लगातार प्रयोग में आती रही हैं। ऐसी ही चिकित्सा विधा है'क्षार-सूत्र' जिसे एनोरेक्टल बीमारियों में अत्यंत प्रभावी माना गया है। 'क्षार-सूत्र' पद्धति के बारे में जनसामान्य को जानकारी देने के उद्देश्य से लिखा गया यह लेख इस पद्धति के बारे में लोगों को और अधिक जागरूक बनायेगा।

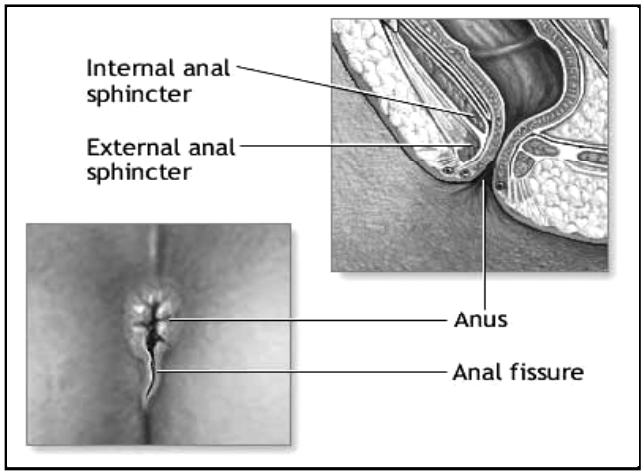

यूँ तो आयुर्वेद की चिकित्सा एक से एक चमत्कारी विधाओं से परिपूर्ण है,परन्तु इनमें से एक विधा जिसे आयुर्वेद के शल्य-तंत्र के अन्तर्गत रखा गया है,वह है-'क्षार-सूत्र'। गुदमार्ग के रोगियों में अत्यंत प्रभावी एवं निरापद चिकित्सा के रूप में इसे जाना जाता है। 'क्षार-सूत्र' संस्कृत के दो शब्दों 'क्षार' एवं 'सूत्र' के मिलने से बना है। सस्ंकृत में 'क्षार' का अर्थ जलाने या काटने तथा 'सूत्र' का प्रयोग धागे के लिये किया गया है। 'क्षार-सूत्र' का सबसे पहले वर्णन शल्य-चिकित्सा के पितामह आचार्य सुश्रुत ने प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रन्थ सुश्रुत संहिता में किया है। उन्होनें 'क्षार-सूत्र' चिकित्सा को नाडी-व्रण (साइनस) ,भगन्दर (फिश्चुला-इन-एनो) एवं अर्बुद की चिकित्सा में कारगर बताया है। आयुर्वेद के प्रमुख तीन ग्रंथो में 'क्षार-सूत्र' का वर्णन मिलता है, परन्तु इनमें से किसी में भी 'क्षार-सूत्र' के निर्माण की विधि नहीं बताई गयी है। ग्याहरवीं शताब्दी के आचार्य चक्रपाणीदत्त ने अपनी पुस्तक 'चक्रदत्त' में इसे बनाने की विधि के साथ भगन्दर एवं अर्श में इसके प्रयोग का वर्णन किया। आचार्य चक्रपाणीदत्त ने अपनी पुस्तक 'चक्रदत्त' में स्नूही के दुग्ध एवं हरिद्रा के चूर्ण के लगातार संयोग से इसे बनाने का विधान बतलाया है। उनके बाद के आचार्य भावमिश्र, भेषज्य रत्नावली इत्यादि ग्रन्थों में भी इसी प्रकार की विधि का वर्णन मिलता है। कालान्तर में इसकी विधि एवं 'क्षार-सूत्र' निर्माण का ठीक ढंग से प्रचार-प्रसार न हो पाने के कारण यह विधि आयुर्वेदिक चिकित्सकों के बीच इतनी लोकप्रिय नहीं हो पायी थी। बाद में रसतरंगिणी नामक ग्रंथ में इसके निर्माण विधि का विस्तार से वर्णन मिलता है। 'क्षार-सूत्र' विधा को वर्तमान समय में वैज्ञानिक कसौटी पर साबित कर लोकप्रियता के शिखर पर पहुँचाने का श्रेय बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर पी. जी.देशपाण्डे एवं उनकी टीम को जाता है। उन्होने इस विधा को पुर्न:जीवित कर मानकीकृत करने का कार्य किया। इसके पश्चात गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय जामनगर के प्रोफेसर कुलवन्त सिंह ने 'क्षार-सूत्र' विधि का व्यापक प्रयोग पाइल्स,पुराने फिशर एवं अन्य ग्रंथियों की चिकित्सा में किया है।

'क्षार-सूत्र' निर्माण की विधि:-

'क्षार-सूत्र' को स्नूही दुग्ध, अपामार्ग-क्षार एवं हरिद्रा के चूर्ण के साथ सर्जीकल लाइन्न (20 नंम्बर के सर्जीकल थ्रेड) की मद्द से बनाया जाता है। इस धागे को लम्बाई में हेंगर में लपेटकर प्रत्येक धागे को स्नूही के दुग्ध में भिगोये हुये गौज (रूई) की मद्द से धागे पर फैलाया जाता है। अब स्नूही दुग्ध से युक्त

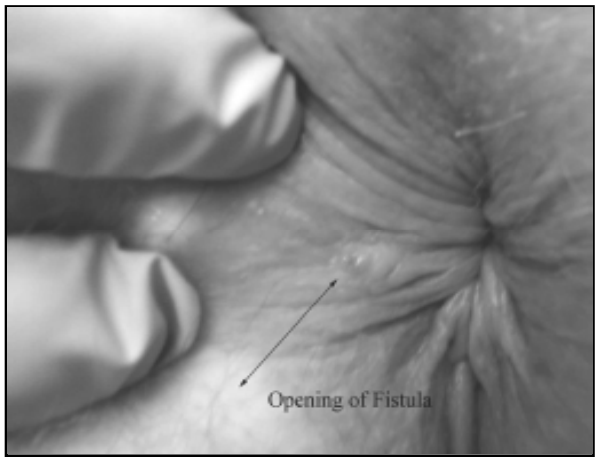

धागे को 'क्षार-सूत्र' केबिनट (एक विशेष प्रकार का विसंक्रमित बॉक्स) में सूखने के लिये छोड़ गीला किया जाता है, पुनः इस विधि को अगले दिन दोहराया जाता है। इस प्रकार स्नूही के दुग्ध से ग्यारह कोटिंग करने के बाद बारहवीं कोटिंग में सर्वप्रथम स्नूही दुग्ध लगाकर गीला करने के पश्चात धागे को अपामार्ग क्षार से लपेटा जाता है। इसे पुनः केबिनट में सूखने के लिये छोड़ दिया जाता है। इस विधि को तब तक दोहराया जाता है,जब तक स्नूही दुग्ध एवं अपामार्ग क्षार की सात कोटिंग पूर्ण न हो जाये। अन्तिम तीन कोटिंग इसी प्रकार से स्नूही दुग्ध एवं हरिद्रा के पाउडर से की जाती है,इस प्रकार से कुल 21 कोटिंग कर 'क्षार-सूत्र' का निर्माण किया जाता है।

'क्षार-सूत्र' कैसे काम करता है?:- 'भगन्दर' जिसे 'फिश्चूला-इन-ऐनो' कहा जाता है, इसपर 'क्षार-सूत्र' विधि के अनेकों क्लिनीकल ट्रायल किये गये हैं, जिनसे इसके कार्य करने की विधि की जानकारी मिलती है। 'क्षार-सूत्र' स्वयं में एन्टीमाइक्रोबियल प्रभाव दर्शाता है, साथ ही यह 'भगन्दर' से मवाद को भी बाहर निकालता है,जिससे घाव भरना प्रारम्भ हो जाता है। इसके अलावा क्षार स्वयं में धीरे-धीरे त्वचा को काटने के साथ-साथ बने हुये घाव को भरने का भी काम करता है। अधिकांश अध्ययनों से यह बात साबित हो चुकी है,कि 'क्षार-सूत्र' विधि एनोरेक्टल बीमारियों में प्रभावी है,तथा इससे रोगी को सर्जरी की अपेक्षा कम परेशानियों का सामना करना पडता है। 'क्षार-सूत्र' घाव को काटने,साफ करने,मवाद बाहर निकालने, सड़े-गले उत्तकों को हटाने एवं जलाने का तथा घाव को शीघ्र भरने जैसे प्रभाव दर्शाता है।

'क्षार-सूत्र' विधि के फायदे:-

* इस विधि के दौरान रोगी का एक बूँद खून भी नही निकलता है। इस विधि से ठीक किये गये गुदारोगों के दोबारा होने की सम्भावना नहीं होती है।

*इस विधि में रोगी को अस्पताल में भरती नहीं होना पड़ता है।

* इस विधि में रोगी को कोई दर्द नहीं होता है तथा रोगी उसी दिन से अपना दैनिक सामान्य कार्य कर सकता है।

झलकियां

उत्तराखण्ड राज्य के देहरादून में राष्ट्रीय आरोग्य स्वास्थ्य मेले का शुभारम्भ करते हुए मुख्यमंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक व अन्य

☜ राष्ट्रीय आरोग्य स्वास्थ्य मेले के शुभारम्भ का छायाचित्र

आयुर्वेदिक चिकित्सक डॉ. अनिल कुमार जोशी के सेवानिवृत होने पर पिथौरागढ़ में विदाई देते चिकित्सक

पिण्डस्वेदः पंचकर्म की लोकप्रिय चिकित्सा

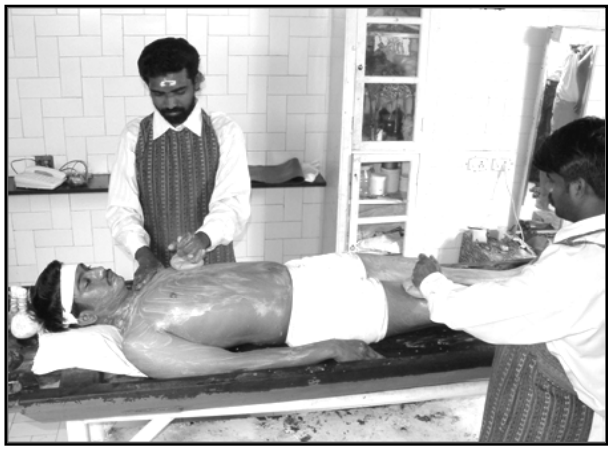

पंचकर्म आयुर्वेद की निरापद चिकित्सा पद्धति है। शोधन के अन्तर्गत आने वाली आयुर्वेद की इस चिकित्सा विधा के विभिन्न रोगों में चमत्कारिक प्रभाव देखे जाते हैं। पंचकर्म विधा के पूर्वकर्म के अन्तर्गत प्रयुक्त की जानेवाली स्वेदन की प्रक्रिया में 'पिण्डस्वेद' विभिन्न व्याधियों में निरापद तथा सरल चिकित्सा है,जिसका वर्णन इस लेख में किया गया है।

पंचकर्म चिकित्सा के पूर्वकर्म चिकित्सा के अर्न्तगत स्नेहन के बाद स्वेदन चिकित्सा का वर्णन है। स्वेदन के अर्न्तगत 13 प्रकार के 'अग्निकृत स्वेदन' का वर्णन आयुर्वेदिक चिकित्सा में किया गया है,जो 1. संकर, 2. प्रस्तर, 3. नाडी, 4.परिषेक, 5. जेन्ताक, 6. अश्मघ्न, 7. कर्षु, 8.कुटी, 9. भू 10. कुम्भिका, 11. कूप, 12. होलाक, 13. अवगाह एवं 'अनग्निकृत स्वेदन' जिसके अर्न्तगत 1. व्यायाम, 2. उष्ण सदन, 3. गुरूप्रावरण, 4. क्षुधा, 5. बहुपानम, 6. भय, 7. उपनाह, 8. क्रोध, 9. आहव, 10.आतप आते हैं। इनमें 'अग्निकृत स्वेदन' के अर्न्तगत आने वाले संकर स्वेद की एक क्रिया जिसे 'षष्टिकशाली पिण्डस्वेद' कहा जाता है,केरल के आयुर्वेदिक चिकित्सकों के बीच अत्यंत लोकप्रिय चिकित्सा है। इसमें औषधि से युक्त पिण्ड के बाह्य प्रयोग से रोगों की चिकित्सा की जाती है। आचार्य चरक एवं आचार्य वागभट्ट ने इसे 'पिण्डस्वेद' के अर्न्तगत वर्णित किया है परन्तु इसे रोगियों में सम्पन्न करने की विधि को स्पष्ट नहीं किया है। केरल में चिकित्सक इसे काफी लम्बे समय से 'नवरा-खि-जी' के नाम से प्रयोग कराते आ रहे हैं।

किन रोगों में 'षष्टिकशाली पिण्डस्वेद' का प्रयोग कराया जाना चाहिए?

* पैरालाईसिस (पक्षाघात)
* फ्रोजन-सोल्डर
* पोलियोमाईलाईटिस
* तपेदिक (क्षय)
* ऑस्टियोआर्थ्राइटिस (संधिवात)
* मोनोप्लेजिया
* पैराप्लेजिया
* कार्श्य (दुबलापन)
* शूल

'षष्टिकशाली पिण्डस्वेद' के घटकः-

बलामूल चूर्णः50 ग्राम, दशमूल चूर्णः 50 ग्राम,चावल : 250 ग्राम ,दूध : 500 मिली, दो कपड़े (18x 18 इंच के टुकड़े)।

कुछ चिकित्सक बलामूल एवं दशमूल चूर्ण के स्थान पर मांसरोहिणी चूर्ण का प्रयोग कराते हैं।

'षष्टिकशाली पिण्डस्वेद' की विधि :- 50 ग्राम बलामूल एवं दशमूल चूर्ण को 4 लीटर पानी में लेकर खुले बर्तन में 1 लीटर शेष रहने तक उबालकर पकायें। अब इस क्वाथ में से आधे लीटर को अलग से बर्तन में रख दें तथा उसमें आधा लीटर गाय का दूध, 250 ग्राम चावल को डालकर पकाकर पेस्ट बना लें।

अब इसप्रकार बनाये गये पेस्ट को 18x18 इंच के दो कपड़े के टुकड़े में रखकर गोले की तरह पिण्ड स्वरूप बना लें। अब बचे हुए काढ़े में इस पिण्ड को डुबाने के लिए अलग से रखे।

50 ग्राम आमलकी चूर्ण को पानी या दूध के साथ मिलाकर रातभर छोड़कर अलग से फिर पेस्ट बना लें।

पूर्वकर्मः-रोगी के कपड़ों को उतार कर उसे लंगोट पहनाकर लकड़ी के टेबल पर लिटा दें तथा बलातेल या महानारायणतेल की सबसे पहले सिर पर मालिश करें, तत्पश्चात् इसी तेल को सम्पूर्ण शरीर पर 15 मिनट तक लगायें। इसे लगाने के बाद आमलकी का पेस्ट सिर के उपर कपड़े की मद्द से बाँध दें।

प्रधानकर्मः-एक व्यक्ति दोनों तरफ से पिण्ड को दाहिने हाथ में पकड़कर पात्र में रखे क्वाथ में डुबाते हुए बायें हाथ पर पिण्ड की उष्णता को शरीर के सहने लायक होने की जाँच करे तथा धीरे-धीरे पिण्ड की मालिश करे, पिण्ड की उष्णता कम होने पर क्वाथ में डुबाकर पुनःमालिश की क्रिया को जारी रखें। इसप्रकार मालिश को 30-45 मिनट तक सात अलग-अलग स्थितियों में सम्पन्न करायें।

सात स्थितियाँः- 1. पैरों को सामने रखते हुए बिठाकर, 2. पीठ के बल लिटाकर, 3. बायें करवट लिटाकर, 4. दाहिने करवट लिटाकर, 5. पेट के बल लिटाकर, 6. पीठ के बल लिटाकर, 7. पैरों के सामने रखते हुए बिठाकर

पश्चातकर्मः- इसप्रकार पिण्ड स्वेदन की क्रिया सम्पन्न होने के बाद,पिण्ड के घटकों को काढ़े के साथ मिलाते हुए सुखोष्ण कर प्रभावित हिस्से में फैला दें। 10-15 मिनट के बाद इस पेस्ट को हटा लें तथा रोगी को गुनगुने पानी से नहलाकर आराम करने को निर्देशित करें।

'षष्टिकशाली पिण्डस्वेदन' की अवधिः-इसे रोगी के रोग के अनुसार 7, 14, 21 या 28 दिन तक कराया जा सकता है।

'षष्टिकशाली पिण्डस्वेदन' शरीर के प्रभावित हिस्से में रक्त के प्रवाह को ठीक करते हुए जोड़ों की जकडन को दूर करता है। यह शरीर के वजन को बढ़ाने के साथ-साथ माँसपेशियों के क्षय को भी दूर करता है। यह सभी तंत्रिकातंत्र से सम्बंधित विकृतियों को दूर करने में प्रभावी है। स्वस्थ व्यक्ति में इसके प्रयोग से शरीर दृढ़ एवं मजबूत होता है।

❁❁❁❁❁

आयुष दर्पण के नूतन अंक के साथ

डॉ. रामहर्ष सिंह
इमिरेट्स प्रोफेसर, काय-चिकित्सा,
बी.एच.यू. वाराणसी (उ.प्र.)

आयुष दर्पण के नूतन अंक के साथ

कुलपति,उत्तराखण्ड मुक्त
विश्वविद्यालय, हल्द्वानी (उत्तराखण्ड)

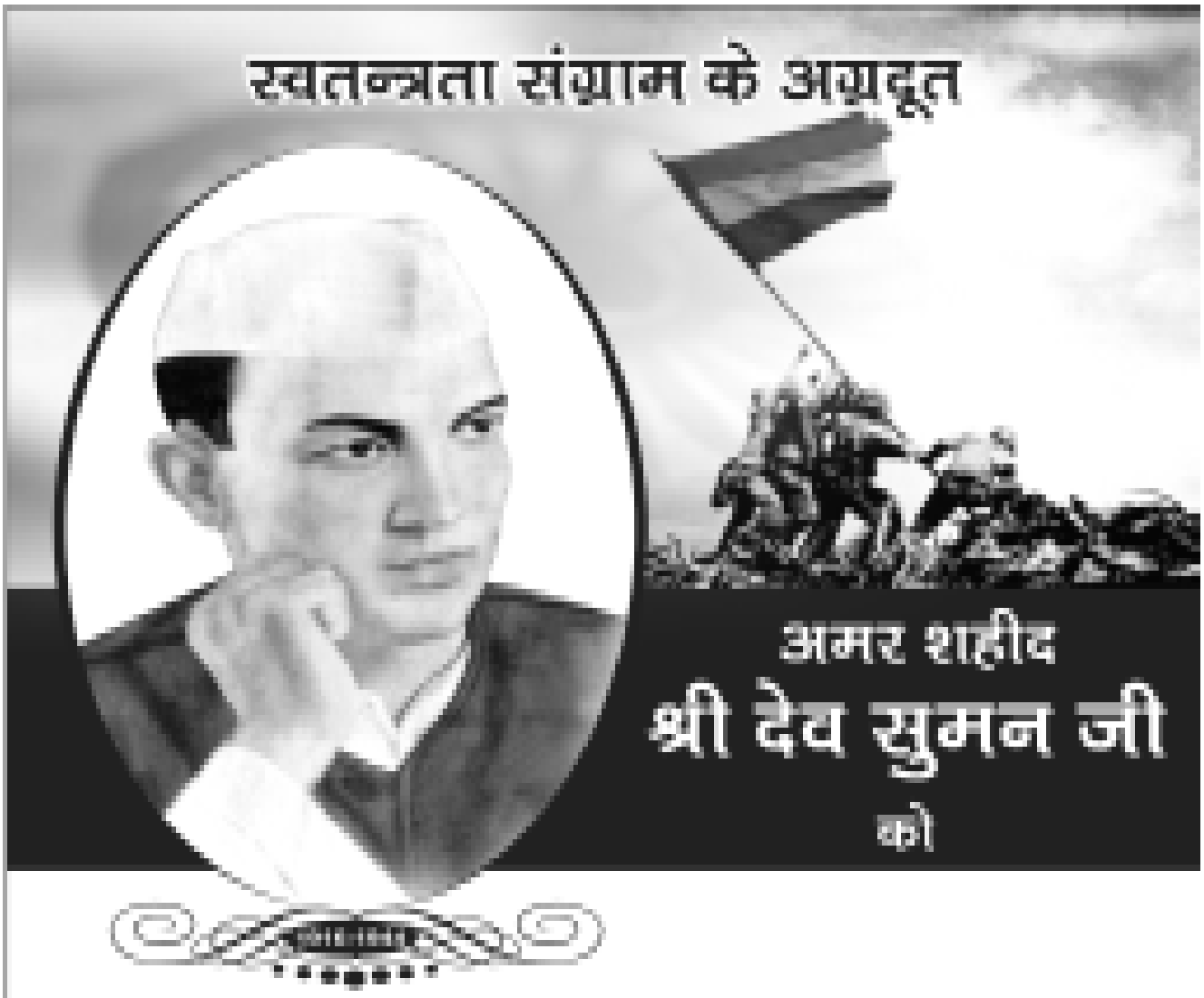

उनकी पुण्यतिथि पर प्रदेशवासियों
की ओर से शत-शत नमन

गुदा-रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा

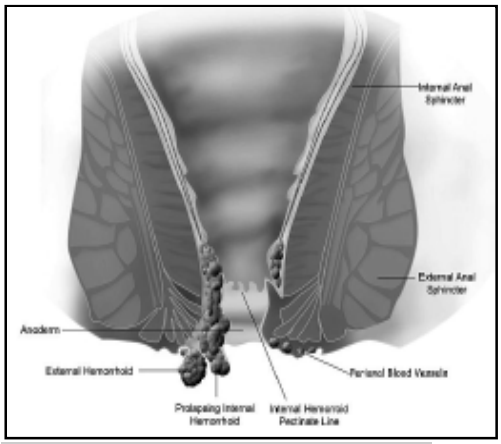

प्रकृति के निकट रहना प्रकृति से निर्मित शरीर की रक्षा के लिए आवश्यक है। ठीक इसी प्रकार रोगों की चिकित्सा में भी प्राकृतिक विधियाँ अपनाना निरापद एवं प्रभावी है। इस लेख में एनोरेक्टल बीमारियों की चिकित्सा हेतु प्राकृतिक उपायों पर चर्चा की गयी है।

एनोरेक्टल बीमारियों के अर्न्तगत गुदा मार्ग से सम्बंधित बीमारियाँ जैसे:पाइल्स,फिशर,फिश्चुला आदि रोग आते हैं। इनमें से अधिकांश रोगों का कारण गलत खान-पान है। प्राकृतिक ढंग से आहार-विहार कर इन रोगों से काफी हद तक बचा जा सकता है। एनोरेक्टल बीमारियों में मुख्य बीमारियाँ निम्न होती हैं:-

* **<u>पाइल्स:-</u>** आहार में रेशेदार तत्वों की कमी के कारण लगातार कब्ज बना रहता है,जिससे मल त्याग सामान्य न होकर,बार-बार जाना या कभी-कभी जाना जैसी आदतों का व्यक्ति आदी बन जाता है। पानी का कम मात्रा में सेवन भी इस स्थिति के लिए जवाबदेह होता है। इससे गुदा मार्ग में स्थानिक संक्रमण हो जाता है। गुदा के चारों तरफ सूजन तथा एक माँस की अनुभूति होती है, जिसे 'पाइल्स' नाम दिया जाता है। यदि यह अधिक फूल गया हो तो गुदा के चारों तरफ गर्म या ठंडे कॉन्ट्रास्ट पैड का प्रयोग करना उपयुक्त होता है। गुदामार्ग की सफाई भी इस रोग में आवश्यक होती है। रोगी को सूजन एवं दर्द से राहत पाने के लिए थोड़ा आराम भी आवश्यक है। अनावश्यक रूप से मलत्याग करते समय तनाव देने से बचना चाहिए। अधिक से अधिक ताजी फल सब्जियों,अंकुरित दालों, चोकर युक्त आंटे से बने गेहूँ की रोटियों का प्रयोग 'पाइल्स' से बचाव का एक सरल प्राकृतिक उपाय होता है। रोगी को पर्याप्त मात्रा में तरल पदार्थों का सेवन करना चाहिए। रोगी को चाय,कॉफी एवं मदिरापान से बचना चाहिए।

<u>कारण एवं लक्षण:-</u>यह किसी भी आयु वर्ग में मिलने वाला रोग है। इसे आधुनिक विज्ञान की भाषा में Haemorrhoid कहते हैं। मल के साथ खून आना,मलद्वार के पास मस्से की अनुभूती एवं दर्द इसका लक्षण है। यह आवश्यक नहीं होता है,कि हर रोगी में मलत्याग के साथ खून आये। यह बाहरी (External) एवं आन्तरिक (Internal) दो प्रकार का होता है। महिलाओं की अपेक्षा पुरूषों में यह अधिक पाया जाता है। प्राकृतिक चिकित्सा के अनुसार इस रोग का मूल कारण कब्ज का होना है।

<u>बचाव के उपाय:-</u> 'पाइल्स' के रोगियों में बचाव के लिए प्राकृतिक आहार-विहार आवश्यक है। पश्चिमी देशों में इसके अधिक रोगी होने का कारण,वहाँ के आहार में रेशों (Fibre) की कमी होती है। इन्हीं कारणों से प्राकृतिक चिकित्सक भोजन में रेशेदार खाद्य पदार्थों के प्रयोग की सलाह देते हैं। तले-भुने,मिर्च-मसालेदार,उच्च कैलोरी युक्त भोजन का सेवन गुदामार्ग के रोगों की सम्भावना को बढ़ा देता है।

<u>प्राकृतिक उपचार</u>:- पाइल्स का उपचार निम्न चरणों में होता है:-

* प्राकृतिक चिकित्सा
* नानऑपरेटिव चिकित्सा
* ऑपरेटिव चिकित्सा
* इन्जेक्शन चिकित्सा
* रबरबैंड लाईगेशन
* मेनुवल-एनल-डायलेशन
* क्रायोसर्जरी

* इनफ्रारेड कोएगुलेशन
* क्षार-सूत्र चिकित्सा
* सर्जिकल चिकित्सा

तृतीय एवं चतुर्थ डिग्री के पाइल्स में केवल 'क्षार-सूत्र' या सर्जिकल चिकित्सा ही प्रभावी है। प्रथम एवं द्वितीय डिग्री के पाइल्स में यदि रोगी चिकित्सक के निर्देशों का उचित रूप से पालन करता है तो प्राकृतिक चिकित्सा भी बड़ी कारगर होती है। प्राकृतिक चिकित्सा में आहार, हाइड्रोथैरेपी, मड-थैरेपी, योग के अभ्यास के द्वारा रोगी का उपचार दिया जाता है। प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा रोगी को कब्ज से राहत मिलती है तथा मस्सों में रक्त का उचित प्रवाह हो पाता है जिसके लिए,शोधन की प्रक्रिया के अर्न्तगत उपवास,एनीमा एवं विश्राम कराया जाता है। रोगी को नींबू पानी का प्रयोग स्थिति के अनुसार पाँच से आठ दिन,आठ से दस गिलास की मात्रा में पिलाया जाता है। उपवास से रोगी के रक्त से विकृत रसायन बाहर निकल जाते हैं तथा मस्सों में रक्त प्रवाह नियमित होने लगता है। जैसा कि पहले बताया गया है,कि भोजन में रेशेदार पदार्थों की प्रचुर मात्रा में प्रयोग से मल साफ होकर आता है, जिससे मस्सों की वृद्धि की सम्भावना कम हो जाती है। इसके अलावा मड़पैक, एनिमा, कोल्डहिपबाथ, वार्महिपबाथ एवं आईसपैक का प्रयोग तीन से पाँच मिनट तक कराया जाता है। यह बात रोगी के दिमाग में डालनी आवश्यक है,कि प्रातःकाल मलत्याग की नियमित आदत बनानी चाहिए तथा मलत्याग में अनावश्यक दबाव बनाने से बचना चाहिए। कुछ दैनिक व्यायाम,योग के आसनों का अभ्यास नियमित खेलना,घूमना इस रोग से बचाव में कारगर होता है।

फिशरः- गुदामार्ग पर स्थित श्लेष्मा झिल्ली में कटाव या फट जाने के कारण फिशर बनता है। ऐसे लोगों में तनाव,बैठे रहने की प्रवृति अधिक देखी जाती है। इसके अलावा पुराना कब्ज एवं पुराना अतिसार भी इस रोग को उत्पन्न कर सकता है। पुराना फिशर ठीक होता रहता है तथा दुबारा भी होता रहता है। इसमें से मवाद तथा कभी-कभी खून भी आता है। कई बार श्लेष्मा झिल्ली मलद्वार बाहर की तरफ आकर एक गांठ जैसी आकृति बन जाती है, जिसे Sentinal pile mass कहते हैं। फिशर की चिकित्सा में कब्ज को दूर करना सबसे पहली प्राथमिकता होनी चाहिए। प्राकृतिक चिकित्सा के अर्न्तगत इसमें हॉट एवं कोल्ड कॉन्ट्रास्ट पैक का प्रयोग कराया जाता है, इसके अलावा रोगी को मिर्च-मसाले,अचार,तले-भुने खाद्य पदार्थो के सेवन से बचने की सलाह दी जाती है। रोगी के शरीर की शुद्धि उपवास एवं एनिमा द्वारा कराया जाने का विधान है। रोगी में आहार हल्का,चर्बीरहित तथा रेशों से भरपूर होना चाहिए।

फिश्चुलाः- गुदामार्ग के रोगों से एक चौथाई रोग 'फिश्चुला' कहलाता है। इसे आम बोल-चाल की भाषा में 'भगन्दर' कहते हैं। संक्रमण के कारण, रेक्टम या गुदामार्ग के बाहरी हिस्से में एक गुहा विकसित होती है। इस गुहा रूपी नाड़ीव्रण से मवाद आना,खुजली,दबाने पर दर्द,मलत्याग करने में दर्द जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं। फिश्चुला की सामान्य रूप से सर्जरी द्वारा चिकित्सा करने का विधान है। इसकी चिकित्सा में आयुर्वेदिक 'क्षार-सूत्र' चिकित्सा भी अत्यंत प्रभावी है। कुछ रोगियों में सर्जरी के बाद भी बार-बार उत्पन्न होने की प्रवृति देखी जाती है। प्राकृतिक चिकित्सा से 'फिश्चुला-इन-एनो' को ठीक किया जा सकता है तथा यह दुबारा भी नहीं होता है। बस आवश्यकता इस बात की है कि रोगी प्राकृतिक चिकित्सक द्वारा बताये गये उपचार,व्यायाम एवं आहार पर नियंत्रण का सख्ती से पालन करे।

❁❁❁❁❁

जोड़ों का दर्द अब न हो परेशान

यदि आप जोडों के दर्द से परेशान है,तो घबराने की जरूरत नहीं है,आयुर्वेद के कुछ उपाय आपको दर्द से निजात दिलाने में कारगर होंगे

* सोंठ,मरिच एवं पिपली का प्रयोग त्रिकटु के रूप में आधा चम्मच नित्य गुनगुने पानी से करने से जोडों के दर्द में लाभ मिलता है।

* एरन्डी के जड़ का चूर्ण आधे से एक चम्मच लेने से भी गठिया के रोगियों में चमत्कारिक लाभ देखा जाता है।

*यदि जोड़ों का दर्द बहुत पुराना हो,तो बालू की पोटली का सेक भी सूजन से राहत दिलाता है।

* प्रारम्भिक अवस्था में यदि जोड़ों के दर्द की शुरूवात हुयी हो तो एरन्डी के तेल की मालिश भी अत्यंत प्रभावी होती है।

* केवल सोंठ का प्रयोग भी पुराने से पुराने जोड़ों के दर्द में लाभ देता है।

* अश्वगंधा,शतावरी एवं आमलकी का चूर्ण जोड़ों में दर्द के कारण आयी कमजोरी को दूर करता है।

* दशमूल का काढ़ा भी 10-15 मिली की मात्रा में प्रयोग करने पर जोड़ों के दर्द में लाभ मिलता है।

*जोड़ों के दर्द के साथ यदि सूजन हो एरन्ड़ एवं र्निगुन्डी के पत्ते से की गयी सिकांई दर्द एवं सूजन को कम करती है।

* यदि गठियावात (आथ्राइटिस) के दर्द का कारण(रूयूमेट्वायड) फेक्टर हो तो गुग्गुलु का प्रयोग चिकित्सक के परामर्श से करना चाहिए।

* गठियावात के कारण उत्पन्न जोड़ों के दर्द में पंचकर्म चिकित्सा अत्यंत प्रभावी होती है।

* यदि जोड़ों के दर्द का कारण यूरिक एसिड का बढना रहा हो तो,भोजन में प्रोटीन की मात्रा कम कर देनी चाहिए।

* जोड़ों में सूजन की अवस्था में योग-आसनों का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

* गठिया की प्रारम्भिक अवस्था में योग एवं प्राणायाम का नित्य प्रयोग सन्धिवात के कारण होने वाले दर्द को कम करता है।

*गठिया के रोगियों को तले-भुने भोजन का प्रयोग नहीं करना चाहिए। जोड़ों के दर्द में भोजन में उड़द की दाल,भिन्डी,बैंगन एवं अचार का सेवन वर्जित है।

* हरी पत्तेदार एवं रेशेदार फल सब्जियाँ,रोगी के कब्ज को ठीक कर जोड़ों के दर्द में लाभ पहुँचाती है।

दही है बड़ी गुणी पर कब जाने अब!

हमारी धर्म एवं सस्कृति में दही का बड़ा महत्व है,पूजा हो त्योहार या कहीं जाना हो यात्रा पर! या करनी हो शुभ कार्य की शुरूवात!तो इन सब में याद आता है,'दही' बड़ी गुणी है 'दही',पर कब? यह आयुर्वेद के ऋषि-मुनियों के वचन से आप जान सकते हैं। दही के बारे में कुछ तथ्य आपको इसकी विशेषताओं के परिचित करायेंगे:-

*दही हमेशा ताजी ही प्रयोग करनी चाहिए। रात्रि में दही के सेवन को हल्का काला नमक एवं शक्कर के साथ ही लिया जाना चाहिए। माँसहार के साथ दही के सेवन को विरूद्ध माना गया है।

*दही दस्त एवं अतिसार के रोगियों में मल को बांधने वाली होती है,परन्तु सामान्य अवस्था में अभिष्यंदी अर्थात कब्ज कर सकती है। नित्य सेवन से दही का प्रभाव शरीर के लिये सात्म्य हो कर गुणकारी हो जाता है। मधुमेह से पीड़ित रोगियों में दही का सेवन संयम से करना चाहिए।

*दही का सेवन कुछ आयुर्वेदिक दवाओं में सहपान के रूप में करने का भी विधान है,जिससे दवाओं का प्रभाव बढ़ जाता है।

* दही से बना मठ्ठा कोलाइटिस के रोगियों में राम-बाण आयुर्वेदिक दवा है।

* बच्चों में ताजी दही पेट सम्बंधी विकारों को दूर करती है।

* दही एवं कच्चे केले को पकाकर आँवयुक्त अतिसार (म्युकोइड्-स्टूल) को रोका जा सकता है।

* यदि खाँसी जुखाम,टॉनसिल्स एवं साँस की तकलीफ हो,तब दही का सेवन न करें तो अच्छा।

* दही सदैव ताजी,शुद्ध एवं घर में मिट्टी के बर्तन की बनी,अत्यंत गुणकारी होती है।

* त्वचा रोगों में दही का सेवन सावधानीपूर्वक चिकित्सक के निर्देशन में ही करना चाहिए। तो ऐसी है, दही बड़ी गुणकारी, रोगों में दवा पर सावधानी से करें प्रयोग।

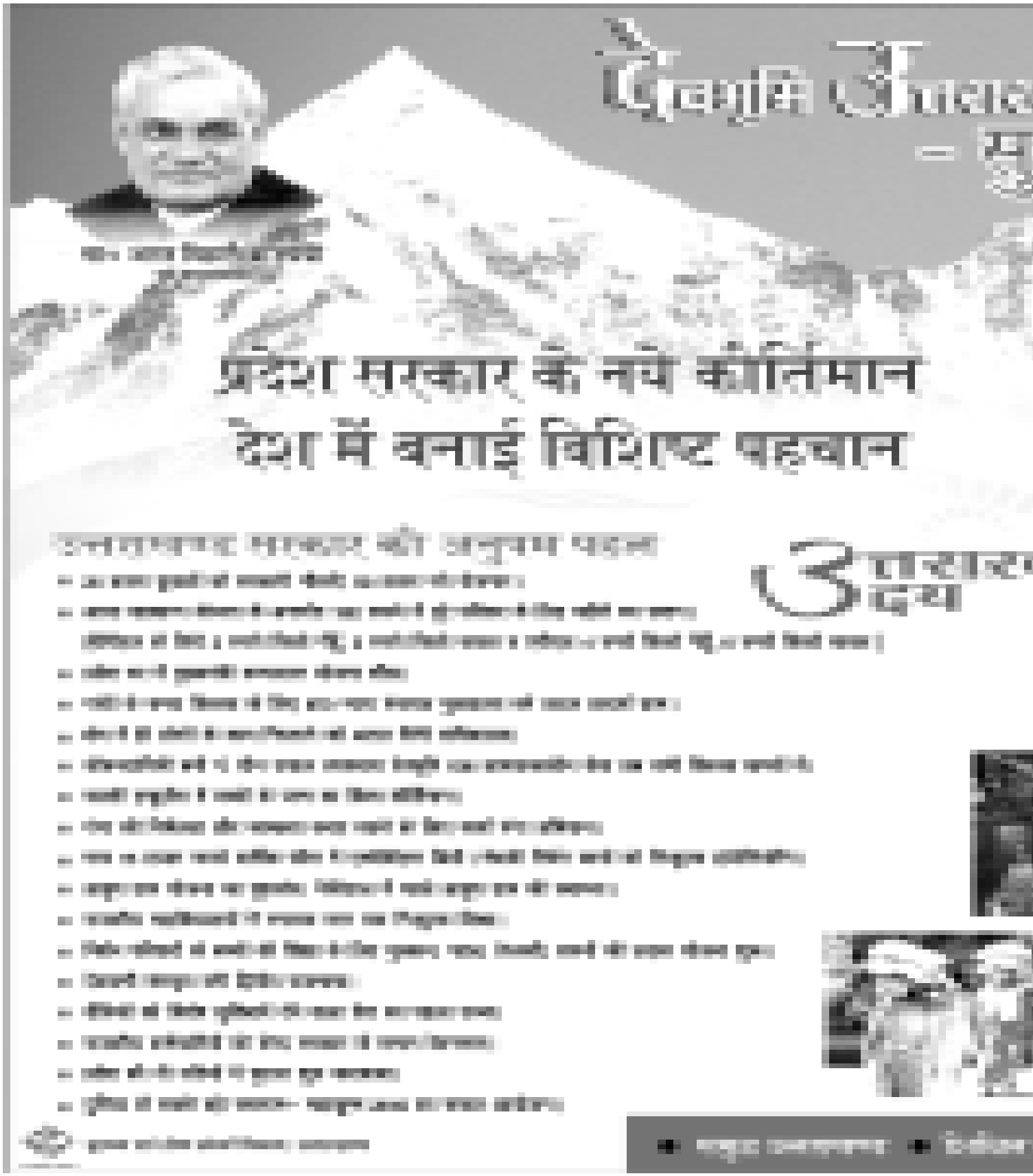

प्रदेश सरकार के नये कीर्तिमान
देश में बनाई विशिष्ट पहचान

समाज की ओर

वैद्यजी की सुनिये:-

* हमेशा उबला पानी पीना स्वास्थ्य के लिए हितकारी होता है, क्योंकि वर्षा में पैदा होने वाले संक्रामक विषाणु युक्त पानी एवं भोज्य पदार्थों के सेवन से रोगों के लक्षण पीलिया की सम्भावना बनी रहती है।

* वर्षा या सभी ऋतु में हरी पत्तेदार सब्जियाँ नमक मिश्रित पानी से धोकर ही सेवन करना चाहिए।

* घर के आस-पास गन्दगी होने के कारण तरह-तरह के कीड़े मकौड़े उत्पन्न होने से संक्रमण उत्पन्न होकर तथा वातावरण अशुद्ध होने से पीलिया जैसे लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं। अत: नाली, मूत्रालय-शौचालय,गौशाला आदि में फिनायल, ब्लीचिंग पाउडर आदि डालकर विसंक्रमित किया जाना चाहिए।

* प्रतिदिन अदरख, नींबू, खीरा आदि का प्रचुर मात्रा में सेवन करना चाहिए, इससे शरीर में जलियांश की पूर्ति होती है।

* मूली के पत्ते के रस में थोड़ी चीनी मिलाकर सेवन करना अमृत समान गुणकारी होता है तथा रोगी को पीलिया के लक्षणों से मुक्ति दिलाता है।

* वर्षा ऋतु के आरम्भ,मध्य में होनेवाले ज्वर, जिसमें शरीर के टूटने एवं जलन जैसे लक्षणों के उत्पन्न होने पर विशेष सावधानी रखते हुए,खून की जाँच कराकर औषधि का सेवन करना चाहिए।

* लौहपूर्ति कारक खाद्य पदार्थ जैसे:बथुवा, गाजर, पालक, आँवला का सेवन पीलिया के लक्षणों से राहत दिलाने में हितकारी होता है।

*योग की क्रियायें: नेति, धोती, शंखप्रछालन, भ्रस्त्रिका, अनुलोम-विलोम प्राणायाम आदि का नियमित अभ्यास कर आप स्वस्थ एवं पीलिया रोग के लक्षणों से बचे रह सकते हैं।

* सप्ताह में दो बार चिरायता एवं कुटकी तीन-तीन ग्राम एक गिलास पानी में भिगोंकर प्रात:काल इसे अमृत के समान पान करना पीलिया के लक्षणों में कारगर उपचार है, इसका प्रतिदिन सेवन अन्य रोगों में भी लाभकारी होता है।

* अतीस, सोंठ, कुटकी, गुग्गुल, गुलाबपुष्प, जौ, चावल, चीनी, तुलसीपत्र, गिलोय, घृतयुक्त होम-यज्ञ को चौथे-पाँचवें दिन अवश्य सम्पन्न कराना चाहिए, जिससे वातावरण विसंक्रमित होकर जीवाणु एवं विषाणुजन्य संक्रमण दूर होते हैं।

* पीने के पानी के स्रोत,नौले,कुएँ,में लालपोटास, क्लोरीन की गोलियाँ एवं फिटकरी अवश्य डालना चाहिए, इससे जानवरों के द्वारा जल के दूषित होने से संक्रमण नहीं फैलते हैं।

* गन्दे स्थान पर ब्लीचिंग पाउडर डालकर एवं स्वच्छ वातावरण निर्माण कर पीलिया जैसे घातक रोगों में होने वाले लक्षणों से बचाव किया जा सकता है।

<u>हितकारी औषधि चर्चा:-कुछ सामान्य रोगों में प्रयुक्त की जानेवाली आयुर्वेदिक औषधियाँ:-</u>

* मानसिक रोग, मूर्च्छा, अनिद्रा,पागलपन में : ब्राह्मी, शंखपुष्पी, सर्पगंधा, जटामांसी, मीठीवच, अश्वगंधा समभाग 5 ग्राम पाउडर को गौ दुग्ध से 2 बार सेवन करना उपयोगी होता है।

* सिरदर्द में श्यामातुलसी की मंजरी को नाक से सूंघना (नस्य लेना) चाहिए।

* ब्राह्मीपत्र स्वरस,अकरकरा रस 2-2 ग्राम 3 ग्राम शहद के साथ सेवन करना याददाश्त को बढ़ाता है।

* चोपचीनी,मीठीवच चूर्ण-मिश्री के साथ 1चम्मच दिन में दो बार सेवन करना सिफलिस जैसे रोगों में फायदेमन्द है।

* जटामांसी,नेत्रबाला,लालचन्दन समभाग एक चम्मच दूध से दो बार सेवन करने से अच्छी नींद आती है।

* गधे के दायें पैर का मांस का टुकड़ा, मिर्गी के दौरे के रोगी के बायें पैर में बाँधना चाहिए।

* सिरदर्द में मालकांगनी सूंघना,श्वेत चन्दन पाउडर, दही के साथ लेप करना एवं महानिम्ब (बकेन) के बीस पत्ते पीसकर सिर पर लेप करना चाहिए।

* **<u>नेत्र हितकारी अवयब:-</u>**

* जीरा,गाजर,हरा धनियाँ, सोंफ, सोया, कालाजीरा, हींग समुद्रफेन, तुमरू, मेंहदी, शीतलचीनी, गुलाबपुष्प, पलाश (ढाक) पुष्प, मुलेठी, मंजीठ, कुसुमपत्तों की सब्जी, दारूहल्दी, भृंगराज रस, स्वर्णजीवन्ती, बेलपत्र एवं अंजन का प्रयोग नेत्र के लिए हितकारी होता है।

* नेत्रशूल में अनारदाने के रस का अंजन कराना चाहिए तथा नेत्र में दो-दो बूंद गुलाब जल डालना चाहिए।

* नेत्र से पानी बहना,ज्योर्तिमन्द में उँटकटारा (कण्या: पहाडी नाम) का रसांजन करना चाहिए।

*नेत्र रोगों में रसोंत से रसारंजन करना भी लाभकारी होता है।

❁❁❁❁❁

* वैद्य श्री संतोष शास्त्री
C/0 डॉ ज्ञानप्रकाश कच्चाहारी
खादी बिमल हर्बल, पिथौरागढ़,
उत्तराखण्ड़

ब्रह्मकमलः प्रकृति की अद्भुत औषधि

ब्रह्मकमल हिमालय क्षेत्र में मिलने वाला एक विशेष फूल है, जिसका हिन्दू धर्मावलम्बियों के लिए विशेष महत्व है। इस फूल की खिली हुयी अवस्था में दर्शन को सौभाग्य का प्रतीक माना जाता है। इसे'किंग-ऑफ-हिमालयन फ्लॉवर' भी कहा जाता है। इसे वानस्पतिक नाम Saussurea obvallata से भी जाना जाता है। भारत के उत्तराखण्ड राज्य का यह राजकीय पुष्प है। हिमालय की पर्वत श्रृंखला में यह उत्तरी वर्मा से दक्षिण पश्चिम चीन तक 11000 से 17000 फीट की उँचाई पर पाया जाता है। हिमालय क्षेत्र में इसकी 62 प्रजातियाँ पायी जाती हैं, जिनमें 37 प्रजातियाँ स्थानीय हैं। इसे लुप्त होने वाले पौधों की श्रेणी में रखा गया है। इसकी एक प्रजाति को 'कस्तूरी-कमल' के नाम से जाना जाता है।। 'ब्रह्मकमल' के फूल जुलाई से अगस्त माह के बीच पहाड़ियों के किनारे,चट्टानों के समीप खिलते हैं। यह उत्तराखण्ड राज्य में फूलों की घाटी, हेमकुन्ड झील आदि क्षेत्रों में मिलता है। इसके फूल हल्के पीले-हरे रंग के होते हैं तथा चारों तरफ आवरण से ढके होते हैं,जो इसे पर्वतीय वातावरण की ठंड से बचाने का कार्य करते हैं। ये फूल देखने में लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचते हैं,परन्तु इनकी गंध अच्छी नहीं होती है, इसलिए शायद लोग इसे अपने घरों में नहीं लाते,परन्तु बद्रीनाथ एवं केदारनाथ क्षेत्र में भगवान को अर्पित करने में इस फूल का प्रयोग होता है,' ब्रह्मकमल' में विभिन्न औषधीय गुणों के कारण इसे आयुर्वेदिक औषधि के रूप में प्रयोग कराया जाता है। इसकी जड़ में एक कटु,तिक्त रस प्रधान रेजिन, उड़नशील तेल एवं Saussurea नामक क्षार होता है, जो टॉनिक,एन्टीसेप्टिक एवं वृष्य होता है। इसे शरीर की विभिन्न बीमारियों में चिकित्सा हेतु प्रयोग किया जाता है।

***श्वसन संस्थानः**- ब्रह्मकमल को श्वसन संस्थान से सम्बंधित विभिन्न विकृतियों जैसेः दमा, ब्रोंकाइटिस एवं खाँसी जैसे लक्षणों में प्रयुक्त कराया जाता है।

***हैजाः**- ब्रह्मकमल एक शक्तिशाली एरोमेटिक उद्दीपक है, जिससे हैजे के रोगियों में बहुत ही लाभ मिलता है। एक ग्राम इलायची,तीन ग्राम ताजी 'ब्रह्मकमल' को 120 मिली पानी में मिलाकर बनाया गया घोल 30 ग्राम की मात्रा में प्रति आधे घण्टे के अन्तराल पर हैजे से पीड़ित रोगी को देने से चमत्कारिक लाभ मिलता है।

*'ब्रह्मकमल' समय से पहले बालों के झड़ने एवं पकने को रोकता है।

* 'ब्रह्मकमल' अल्सर से पीड़ित रोगियों के लिए अत्यंत लाभकारी है। इसकी जड़ों को सूखाकर, चूर्ण बनाकर औषधि के रूप में प्रयोग कराया जाता है।

* 'ब्रह्मकमल' के औषधीय गुणों का वर्णन 'ट्रेडिशनल चाइनीज मेडिसीन' एवं तिब्बतीय चिकित्सा पद्धतियों में विस्तार से मिलता है। 'ब्रह्मकमल' के 174 फार्मुलेशन का वर्णन 'द हेन्डबुक ऑफ ट्रेडिशनल तिब्बतन ड्रग्स' में मिलता है। इसके जड़ों से प्राप्त तेल को Costus oil के नाम से जाना जाता है, जिसका प्रयोग परफ्यूम तथा बालों के तेल बनाने में किया जाता है। Costus oil का प्रयोग लेप्रोसी के रोगियों में भी कराया जाता है। हिमाचल प्रदेश के लाहौल एवं स्पीति जिले में इसकी पत्तियों को सूखाकर हुक्के में प्रयोग किया जाता है। इसकी कुछ प्रजातियों का प्रयोग 'आमची' चिकित्सा के नाम से प्रचलित तिब्बतीय चिकित्सा पद्धति में भी किया जाता है। इसकी जड़ों को कटे-जले हुये स्थानों पर लगाने से लाभ मिलता है। इसकी प्रजाति Saussurea lappa को 'कूठ' के नाम से जाना जाता है। यह उष्ण,दीपन, पाचन, उत्तेजक, कफनिःसारक, मूत्रल, वाजीकारक, रसायन, आर्तवजनन, व्रणशोधक, रोपक, उपसर्गनाशक (Dis-infectant), प्रतिदूषक (Antiseptic) औषधि है।

* गुलाब जल के साथ इसे पीसकर हाथ-पैरों की सूजन,सिरदर्द,मोच इत्यादि में प्रयोग कराने से लाभ मिलता है।

* एरण्ड मूल के साथ इसको कांजी में पीसकर लेप करने से सिरदर्द दूर होता है।

* इसके चूर्ण को घी और मधु के साथ चाटना रसायन रूपी प्रभाव दर्शाता है, अर्थात् व्यक्ति को किसी भी प्रकार के रोग नहीं हो पाते तथा आयु के साथ-साथ शरीर की कांति की वृद्धि होती है।

* इसके चूर्ण को एरण्ड तेल के साथ मिलाकर लगाने पर गठिया (आमवात) के रोगियों में लाभ मिलता हैं।

* बार-बार आनेवाली हिचकी में भी इसके धूम्र का सेवन कराया जाता है।

❁❁❁❁❁

आयुर्वेदिक नुस्खे

निसंतान होना हमारे समाज में आज भी अभिशाप माना जाता रहा है। नपुंसकता के कारण नि:संतान होना भी एक साामान्य कारण होता है। कुछ एलोपैथिक दवाएं भी नंपुसकता उत्पन्न कर सकती हैं। इनमें उच्चरक्तचाप की औषधियां एवं मधुमेह जैसे रोग शामिल हैं। कई बार नपुंसकता का कारण शारीरिक न होकर मानसिक होता है, ऐसे में केवल कांऊसीलिंग चिकित्सा ही काफी होती है। ऐसे ही कुछ आयुर्वेदिक नुस्खे स्त्री एवं पुरूषों में नपुंसकताजन्य नि:संतानता के साथ ही शुक्राणुजन्य समस्याओं को दूर करने में कारगर सिद्ध होते हैं, जो निम्न हैं:-

*श्वेत कंटकारी के पंचांग को सुखाकर पाउडर बना लें तथा स्त्री में मासिक धर्म के पाँचवें दिन से लगातार तीन दिन प्रात:एक बार दूध से दें एवं पुरूष को अश्वगंधा-1.5 ग्राम, शतावरी-1.5 ग्राम,विदारीकंद-1.5 ग्राम,तालमखाना-500 मिलीग्राम एवं तालमिश्री-500 मिलीग्राम सब मिलाकर 1-2 चम्मच दूध से प्रात:सायं लेने पर नपुंसकता दूर होती है।

* स्त्री में 'फलघृत' नामक आयुर्वेदिक औषधि इनर्फर्टिलीटी को दूर करती है।

* पलाश के पेड़ की लम्बी जड़ में लगभग 250 मिली की एक शीशी लगाकर इसे जमीन में दबा दें, एक सप्ताह बाद इसे निकाल लें, अब इसमें एकत्र होने वाले निर्यास द्रव को प्रात:पुरूष को एक चम्मच शहद से दें। यह शुक्राणुजनित कमजोरी (ओलिगोस्पर्मीया) को दूर करने में मद्दगार होता है।

*अर्श (पाइल्स) के रोगियों में यदि खून आ रहा हो तो निम्न आयुर्वेदिक घरेलू नुस्खे से लाभ मिलता है:

नारियल की जटा को लेकर जला लें,जब जल जाये तब इसकी राख को छानकर साफ जार में भर लें,अब ताजी दही को एक कटोरी में लेकर एक चम्मच राख घोल दें, राख के अलावा इसमें शक्कर, मिर्च, मसाला आदि कुछ न डालें,अब इस घोल को सुबह उठकर खाली पेट पी जायें तथा कम से कम दो घन्टे बाद ही कुछ खायें,ऐसा तीन दिन तक करें। इससे ब्लीडिंग पाइल्स में लाभ मिलता है।

* मूली के पत्तियों को सुखाकर,जलाकर क्षार बनाकर एक से दो चम्मच की मात्रा में लेने से भी अर्श के रोगियों में लाभ देखा जाता है।

***गुर्दे की पथरी में लाभ देने वाला एक अनुभूत प्रयोग:** लगभग दो किलो नींबू का रस निकाल लें, लगभग रस की मात्रा एक लीटर हो तो अच्छा,अब इसे छान कर काँच की बड़ी बोतल में भर लें, अब इसमें लगभग एक मुठ्ठी कौड़ियाँ डाल कर रख दें,थोड़ा बोतल को हिला लें,कौड़ियाँ बाजार में पंसारी की दुकान में मिल जायेगी,अब कुछ समय के बाद नींबू का रंग दूधिया हो जायेगा,अब रोज प्रात:काल खाली पेट छानकर आधा कप इसे पीयें,इसे तबतक पीयें, जब तक की रस समाप्त न हो जाय, इसके बाद लगभग एक घंटे कुछ न लें,बस इसे लगातार एक महीने तक सेवन करें।

*काली तुलसी के पत्तों का रस दो-दो बूँद नाक में टपकाने से भी सिरदर्द दूर होता है।

*धतूरे के पत्ते एक भाग एवं काली मिर्च एक भाग मिलाकर प्रयोग करना जुखाम, सर्दी एवं खाँसी में अत्यंत गुणकारी योग है।

* आम की गुठली का पाउडर एक ग्राम ताजे पानी से या छांछ से देना अतिसार में लाभकारी होता है।

* मूली को भूनकर, रस निकाल कर दो-दो बूँद कान में डालने से कान का दर्द दूर होता है।

* शुद्ध गाय का घी 15 से 20 ग्राम की मात्रा में लेकर, काली मिर्च के 15 से 5 नग के साथ एक कटोरी में आग पर गर्म करें, जब काली मिर्च कड़कड़ाने लगे और उपर आ जाये तब उतार कर थोड़ा ठंडा कर 20 ग्राम मिश्री या शक्कर मिला लें, तकरीबन आधे मिनट के बाद इसे उतार लें अब थोड़ा गर्म रहने पर चीनी या मिश्री के साथ मिलाकर काली मिर्च चबा-चबा कर खा लें,इसके एक घण्टे बाद तक कुछ न लें, इस प्रयोग को सोते समय तीन से चार दिन लगातार सेवन करने से पुरानी खाँसी में लाभ मिलता है।

(उपरोक्त आयुर्वेदिक नुस्खों का संकलन पारंपरिक वैद्यों के अनुभव से प्राप्त किया गया है, इनका वैद्यकीय निर्देशन में ही प्रयोग करें।)

जानिये अपनी प्रकृति को

अक्सर हमारे मन में ये सवाल उठता है, कि फलाँ मुझे सूट नहीं करता, ये प्रश्न खाने पीने से लेकर हमारे व्यवहार, पहनावे दोस्त पसन्द ना पसन्द स्वास्थ्य, आत्मविश्वास एवं रोगों की सम्भावना को जानने की जिज्ञासा लिये रहता है। आयुर्वेद में इन सभी जिज्ञासाओं का समाधान उपलब्ध है।

आयुर्वेद में हर व्यक्ति की एक विशेष प्रकृति बताई गयी है, इसे दोषों के अनुसार अनुभवी आयुर्वेदिक चिकित्सक निर्धारित करते हैं तथा रोगी की पूर्ण जानकारी का अनुमान लगा लेते हैं। कुछ लोग वातिकप्रकृति के होते है, कुछ पैत्तिक एवं कुछ कफजप्रकृति के। इनमें समरूप से वात-पित्त-कफ वाले स्वस्थ एवं केवल एक दोषज प्रकृति वाले सदा रोगी होते हैं। प्रकृति के अनुसार ही आयुर्वेदिक चिकित्सक खान-पान की सलाह देते हैं, जैसे वातिकप्रकृति वाले व्यक्ति को ठंडा हल्का, रूक्ष खान-पान वात रोगों के लक्षणों जैसे:-जोडों का दर्द, कमर दर्द, सियाटिका, सिरदर्द आदि उत्पन्न कर सकते हैं। इसी प्रकार पित्तप्रकृति वाले व्यक्तियों में गर्म, मिर्च-मसाले युक्त तीखे, चटपटे, खाद्य पदार्थो के सेवन से हाईपरएसिडिटी, पीलिया, बुखार आदि रोग शीघ्र उत्पन्न हो सकते हैं। ठीक इसी प्रकार कफजप्रकृति के व्यक्तियों में मीठा भारी एवं अत्यधिक चिकनाई युक्त खान-पान, कफदोष को बढ़ाकर प्रमेह, मोटापा हृदय रोगों की सम्भावना को उत्पन्न कर सकता है। अत:आयुर्वेदिक चिकित्सक, प्रकृति विरूद्ध, खाने-पान एवं विहार की सलाह देते हैं। प्रकृति के आधार पर हम व्यक्ति की पसन्द- नापसन्द को जान सकते हैं। वातप्रधान को वात, पित्तप्रधान को पित्त और कफप्रधान वाले को कफवर्धक खान-पान एवं विहार पसन्द आता है। ऐसे ही वातिकप्रकृति का व्यक्ति अस्थिर, फुर्तीला, लम्बा, रूखी त्वचा एवं प्राय: श्याम वर्ण का हो सकता है, पैत्तिकप्रकृति वाला व्यक्ति बातों-बातों में गुस्सा करने वाला जैसे गुणों से युक्त होता है, कफजप्रकृति वाला व्यक्ति प्राय: आरामतलवी, मिष्ठान्नप्रेमी, स्थूल,शान्त एवं सोच-समझ कर काम करने वाला होता है। वैसे एक दोष प्रधान प्रकृति वाले लोग कम ही होते हैं।

अधिकांश द्वन्दज प्रकृति के होते हैं। आयुर्वेदिक चिकित्सक प्रकृति का विचार कर खाने-पीने, व्यवहार करने एवं दवा लेने की सलाह लेते हैं। तो यदि आप भी जानना चाहते हैं, अपनी प्रकृति को तो आज ही कुशल आयुर्वेदिक चिकित्सक से अपनी प्रकृति से सम्बंधित गूढ़ रहस्य को जानकर आयुर्वेद द्वारा अपनी प्रकृति निर्धारण करायें एवं स्वस्थ एवं सुखी जीवन का आनन्द लें।

<u>किन बातों का रक्खें ख्याल</u>:-अक्सर बीमारियाँ जाने-अनजाने एवं अधीर होकर व्यवहार करने से होती है। आयुर्वेद में इसे 'प्रज्ञापराध' कहा जाता है। जैसे यदि हमें मालूम है, कि असुरक्षित यौन सम्बन्ध खतरनाक हो सकता है, फिर भी जानबूझकर, अनजाने में या भूलवश किये गये व्यवहार के कारण 'एच.आई.वी.' जैसे संक्रमणों का खतरा उत्पन्न होने का कारण वर्षों पूर्व आयुर्वेद के मनीषियों एवं आचार्यो ने 'प्रज्ञापराध' बताया था।

'प्रज्ञापराध' को सभी रोगों की उत्पत्ति का कारण माना गया है। अर्थात जीवन में खाने-पीने, संयमित व्यवहार करने, पथ्य-अपथ्य, सात्म्य (जो प्रकृति के अनुरूप हो) सेवन, अच्छी दिनचर्या, ऋतुचर्या एवं तनाव मुक्त रहकर मानसिक रूप से स्वस्थ होना आवश्यक है।

कुछ छोटी-छोटी बातें जिसे हमें अपने जीवन में अपनाना चाहिए।

*संयमित व्यवहार

*संयमित खानपान

*संयमित दिनचर्या

*संयमित ऋतुचर्या

*संयमित रूप से चिकित्सक के परामर्श में रसायन औषधि का प्रयोग।

*यम-नियम का पालन करते हुए योग का अभ्यास।

*पंचकर्म का स्वास्थ्य संरक्षण हेतु चिकित्सक के निर्देशन में प्रयोग।

ये कुछ ऐसी बातें है, जो जीवन की गाड़ी को बिना अवरोध के चलाने में सहायक हो सकती है।

दुनिया एक व्यायामशाला

जीवन में सक्रियता एवं व्यायाम के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। आधुनिक शोध भी इस तथ्य को स्पष्ट करते हैं,कि थोड़ा बहुत नियमित व्यायाम भी रोगों से बचाव का माध्यम है। केरोल हार्बलीन अमेरिका की आयुर्वेदिक आहार विशेषज्ञ एवं हेल्थ केयर द्वारा आयुष दर्पण को प्रेषित यह लेख स्पष्ट रूप में इन्ही तथ्यों को स्पष्ट कर रहा है।

एक अच्छे दिन की शुरूवात नीले आसमान के तले,खिली धूप में क्या आप निष्क्रिय होकर प्रारम्भ करना चाहेंगे? या सक्रिय होकर बाहर के मौसम का आनन्द लेते हुये योग,ध्यान एवं प्राणायाम को अपनाकर स्फूर्तिवान बनकर तनावमुक्त दिनचर्या को अपनाना पसंद करेंगे। साँस लेने के अभ्यास (प्राणायाम) का हमारे शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक स्वास्थ्य पर असर पड़ता है। क्यों न हम साँस लेने एवं छोड़ने की इस कला का अभ्यास करें! अपने लिये कुछ समय निकालें। जाड़ों एवं बारिश के मौसम में अक्सर हम प्रातःघर पर ही समय बिताना पसंद करते हैं, क्योंकि बाहर का मौसम अनुकूल नहीं होता है। लेकिन हमें मौसम की परवाह न करते हुए चन्द घन्टे पैदल चलने, ध्यान लगाने या मन के अनुकूल आउटडोर खेलों में भाग लेकर अपने शरीर को सक्रिय रखने का प्रयास करना चाहिए। यदि सम्भव हो तो व्यायामशाला (जिम) जाना चाहिए,क्योंकि इससे एक निश्चित समय पर आप अपने फिटनेस के लिए समय निकाल पाते हैं। व्यायामशाला में ट्रेनर की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। व्यायाम से शरीर की माँसपेशियों में नयी ऊर्जा का संचरण होता है तथा पसीने के रूप में अतिरिक्त केलोरी जलकर उत्सर्जी पदाथों को शरीर से बाहर निकाल देती है। स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से पूरी दुनिया ही एक व्यायामशाला (जिम) है,बस जरूरत है कि आप इस जिम में अपने लिए समय कैसे निकाल पाते हैं। हमें अपने व्यस्त समय में से ही कुछ समय इस व्यायामशाला में स्वयं को फिट रखने के लिए निकालना चाहिए। कुछ बातों का दैनिक रूप से सही ढंग से प्रयोग हमें स्वस्थ एवं प्रसन्नचित रखने में मद्दगार हो सकता है।

* अपने घर के पीछे स्थित पार्क या बगीचे का इस्तेमाल घूमने एवं योग अभ्यास करने के लिए किया जाना चाहिए।

* नाश्ते या भोजन के तत्काल बाद लेटने की प्रवृति से बचते हुए, पाँच मिनट का पैदल भ्रमण भी फायदेमंद होता है, क्या हम अपने लिए यह पाँच मिनट भी नहीं निकाल सकते?

हम अक्सर कार्यालय से आकर घर पर अपने जूते-मोजे एक तरफ रखकर या तो कम्प्यूटर या टेलीविजन के सामने बैठ जाते हैं,क्या हम इस बीच थोड़ी देर का पैदल भ्रमण नहीं कर सकते। बस आवश्यकता है,अपने शरीर के प्रति ध्यान देने की क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क रहता है तथा स्वस्थ मस्तिष्क स्वस्थ आयु प्रदान करने वाला होता है।

❁❁❁❁❁

* केरोल हार्बलीन
आयुर्वेदिक आहार विशेषज्ञ
एवं हेल्थ कोच, यू.एस.ए.

जीवन जीने का आयुर्वेदिक फंडा

जीवन को जीना मात्र मनुष्य का उद्देश्य नहीं होना चाहिए, बल्कि सुखपूर्वक निरोगी जीवन बिताना ही जीवन का उद्देश्य होना चाहिए। आयुर्वेद के कुछ टिप्स अपना कर आप सुखपूर्वक निरोगी जीवन व्यतीत कर सकते हैं, जो निम्न हैं:-

*प्रातकाल बह्ममूहूर्त (4-6) बजे के मध्य अर्थात सूरज उगने से पहले बिस्तर छोड़ दें।

* सुबह दंत-धावन एवं शौच आदि से पूर्व ताँबे के लोटे में रात्रि को रखा पानी पीयें इससे मल खुल कर आता है,तथा कब्ज की शिकायत नही होती है।

* नास्ता एवं भोजन हमेशा भूख से थोड़ा कम करें तथा योग्य आहार का सेवन करें,भोजन के साथ-साथ पानी पीने की प्रवृति से बचें।

* दिनचर्या में जान-बूझकर,अनजाने में या असयंमित होकर किये गये आचरण को 'प्रज्ञापराध' की श्रेणी में रखा जाता है, जो सभी प्रकार के मानसिक एवं शारीरिक रोगों की उत्पत्ति का कारण है।

* भोजन में पथ्य एवं अपथ्य (खाये जाने वाले एवं न खाये जाने) का अवश्य ध्यान दें।

* आहार स्वयं एक औषधि है, अत:ज्ञानेनद्रियों को वश में करते हुये ही भोजन सहित अन्य आचरण करना चाहिए।

* शुद्ध जल एवं वायु का सेवन आयुर्वेद अनुसार रोगों से मुक्ति का मार्ग है।

* भोजन में गाय के दूध का सेवन आयुर्वेद में 'जीवनीय' माना गया है तथा यह स्वयं एक रसायन औषधि है,जिसके नित्य सेवन से बुढ़ापा देर से आता है।

*एक हरड का नित्य सेवन लम्बी आयु देता है,कहा भी गया है,कि 'माँ कभी नाराज हो सकती है,परन्तु हरड नहीं।'

* साल में एक बार शरीर रूपी मशीन का शोधन पंचकर्म चिकित्सक के निर्देशन में अवश्य ही कराना चाहिए, जिससे लम्बी एवं रोगरहित आयु प्राप्त हो।

* रोग प्रतिरोधक क्षमता बढाने के लिये आँवले का नित्य सेवन करना चाहिए।

* आहार में रेशेदार सब्जियों के अलावा दाल का सेवन, शरीर में किसी भी प्रकार के क्षय (टूट-फूट) ठीक करने में मद्दगार होता है।

*आहार में स्नेह तथा घी का नियंत्रित मात्रा में प्रयोग बढ़ती उम्र में होने वाले शारीरिक विकास के लिए आवश्यक है।

* भोजन में लाल मिर्च का सेवन अम्लपित्त (हाईपरएसिडिटी) को बढ़ाता है, एवं भूख को कम कर कब्ज तथा अर्श (पाइल्स) उत्पन्न कर सकता है।

अत:आयुर्वेद में अपनी 'अग्नि' का ध्यान में ही रखकर ही भोजन लेने का निर्देश है। ये कुछ आयुर्वेदिक फंड़े हैं, जिनको आप अपनी दिनचर्या में शामिल कर स्वस्थ एवं 'सुखायु' प्राप्त कर सकते हैं।

कायाकल्प के जनक महर्षि च्यवन

आयुर्वेदिक चिकित्सा के साथ आर्चार्यों,मनीषियों एवं ऋषिमुनियों की कहानी जुड़ी है। ऐसे ही एक महर्षि थे 'च्यवन', जिनके द्वारा स्वयं का कायाकल्प कर चिरयौवन की रक्षा करने का वृतांत मिलता है। एक बार अग्नि ने राक्षस पुलोम से पूछा क्या तुम जानते हो,महर्षि भृगु की पत्नी पुलोमा है? यह जानकर राक्षस पुलोम ने कहा: हाँ ये वो स्त्री है जिससे मैं प्रेम करता था तथा इसके माता पिता ने इसका विवाह मुझसे न कर महर्षि भृगु से कर दिया। इसप्रकार अग्नि की बातें सुन,पुलोम ने पुलोमा को जबरन भगाकर ले जाने का फैसला किया तथा जबरदस्ती भगाकर ले गया। उसने पुलोमा के साथ जबरन राक्षस विवाह सम्पन्न किया जिसे उस काल में मान्यता प्राप्त थी। कहा जाता है,कि पुलोमा के आँसुओं से 'वधुसारा' नामक नदी बन गयी और उसी दौरान उसके गर्भ में पल रहा बालक बाहर आ गया एवं उसने राक्षस पुलोम की तरफ क्रोध भरी आँखों से देखा। उसकी इस प्रकार की दिव्य ज्योति रूपी शक्ति से पुलोम राक्षस अग्नि में जलकर राख हो गया। इसके बाद पुलोमा उस बच्चे को लेकर महर्षि भृगु के आश्रम में वापस आ गयी। गर्भ से च्युत होकर अकस्मात् पैदा होने से वह बालक बाद में 'च्यवन' के नाम से प्रख्यात हुआ। महर्षि भृगु जब आश्रम में वापस आये तब उन्होंने अपनी पत्नी के साथ एक दिव्य बालक को देखा। उन्हें यह भी मालूम हुआ कि अग्नि ने ही पुलोम राक्षस को पुलोमा के बारे में बताया था। यह जानकर भृगु ने अग्नि को सर्वभक्षक होने का श्राप दे दिया। अग्नि श्राप पाकर महर्षि भृगु के चरणों आ गिरे,उन्होंने कहा कि मैने सत्य को बताने के सिवा और कोई गलती नहीं की है। परन्तु दिया गया श्राप तो वापस नहीं लिया जा सकता था। अग्नि ने महसूस किया कि इस श्राप से उसकी शुद्धता प्रभावित हो गयी थी,अर्थात् अग्नि की शक्ति एवं ऊर्जा का प्रभाव प्राणियों के मन-मस्तिष्क पर पड़ने लगा था, जिससे अग्नि अपने कार्य को सम्यक् ढंग से सम्पादित करने में असमर्थ हो गयी थी। यज्ञ-हवन आदि भी प्रभावित होने लगे थे,तब जाकर देवतागण सृष्टि के रचियता ब्रह्मा के पास समाधान हेतु प्रस्तुत हुए। ब्रह्मा ने अग्नि का आह्वान किया तथा कहा कि महर्षि भृगु के श्राप के प्रभाव को तो वापस नहीं लिया जा सकता,लेकिन उन्होंने यह आश्वासन दिया,कि अब अग्नि के द्वारा किसी भी द्रव्य को ग्रहण करने पर भी कोई पाप नहीं होगा तथा इसकी शुद्धता सदैव बनी रहेगी। बालक च्यवन भी धीरे-धीरे बडा हो रहा था, उसका उपनयन संस्कार किया गया तथा उन्होंने सभी वेदों एवं उपनिषदों का अध्ययन किया तथा अपने माता-पिता से आदेश ले कर वैदूर्य पर्वत पर तपस्या करने लगे। तपस्या में समाधि की अवस्था प्राप्त करने पर उनके चारों तरफ दीमकों ने दीवार खड़ी कर दी। उनका पूरा शरीर उस दीवार से ढक गया तथा केवल आँखें ही बाहर से दिखाई दे रही थी। इस तपस्या में वे एक हजार वर्ष तक बने रहे। राजा शर्यांति उस क्षेत्र के राजा थे, जिनकी चार हजार पत्नियाँ तथा एक बड़ी सेना थी। उन्होंने च्यवन ऋषि के तपस्या वाले क्षेत्र में ही अपना आश्रय बनाया था। शर्यांति की पुत्री सुकन्या अत्यंत सुन्दर एवं तेजस्वी थी, एक दिन सुकन्या ने दीमक के उस पर्वत को देखकर पर्वत से निकल रही दिव्य ज्योति को दीमक की ज्योति समझ उसे खोदना प्रारम्भ किया। लेकिन अन्दर समाधिस्थ महर्षि च्यवन के आधे बन्द नेत्रों को देख वह घबरा गयी। महर्षि च्यवन का शरीर जीर्ण-शीर्ण एवं कंकाल का ढाँचा मात्र था। वह भागकर अपने आश्रय में आ गयी परन्तु उसने महर्षि च्यवन की तपोसमाधि को तो भंग कर ही दिया था। इसप्रकार महर्षि च्यवन की तपस्या भंग होने के कारण राजा शर्यांति की पूरी सेना बीमार हो गयी। राजा को जल्दी ही किसी गलती के होने का एहसास हुआ तथा उसने प्रत्येक व्यक्ति को बुलाकर उसके द्वारा जाने-अनजाने में की गयी गलती का पता लगाने का प्रयास किया। सुकन्या को जब इस बात का पता लगा, तब वह अपने पिता के समक्ष उपस्थित हुयी तथा उसने उस घटना का वृतांत पिता को सुनाया। राजा शर्यांति ने मौके की नजाकत को समझकर फौरन उस स्थान पर पहुँचने का निश्चय किया,जहाँ महर्षि च्यवन तपस्या में लीन थे, उन्होंने महर्षि च्यवन के सामने नतमस्तक होकर अनजाने में अपनी पुत्री सुकन्या से हुयी भूल के लिए क्षमा-याचना कर अपनी पुत्री को माफ कर देने के लिए कहा। महर्षि च्यवन ने इस पाप से मुक्ति के लिए राजा शर्यांति से सुकन्या का हाथ विवाह के लिए माँगा। राजा शर्यांति ने इसे सहर्ष स्वीकार करते हुए सुकन्या का विवाह महर्षि च्यवन से सम्पन्न किया। (क्रमशः.....)

आयुर्वेदिक दवाओं की बिक्री के लिए जारी होगा गाईडलाइन

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के रसशास्त्र विभाग में लोगों द्वारा आयुर्वेदिक दवाओं के बढ़ते इस्तेमाल को देखते हुए दिशानिर्देश जारी किये जाने हेतु प्रोजेक्ट चलाने का निर्णय लिया गया है। इस गाइडलाइन को विश्वस्वास्थ्य संगठन के एक प्रोजेक्ट के तहत आयुष विभाग द्वारा प्रायोजित किया जाएगा। इसका मूल उद्देश्य विश्व में आयुर्वेदिक दवाओं के सही इस्तेमाल हेतु लोगों को जागरूक करने हेतु दिशानिर्देश जारी करना होगा। यह अपनी तरह का पहला प्रोजेक्ट होगा जो ट्रेडीशनल दवाओं के सही इस्तेमाल की जानकारी देगा। इस प्रोजेक्ट के द्वारा आयुर्वेदिक दवाओं को सेफ्टी,क्वालिटी एवं इफिकेसी के मापदण्ड पर और अधिक उपयोगी बनाया जायेगा। प्रोजेक्ट के मुख्य अधिकारी आनन्द चौधरी के अनुसार,इस प्रोजेक्ट के माध्यम से जनजागरूकता लाकर उपभोक्ताओं को और अधिक जानकारी प्रदान की जायेगी, जिससे लोग आयुर्वेदिक दवाओं के सही इस्तेमाल के प्रति जागरूक होंगे।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के रसशास्त्र विभाग में हाल ही में औषधि सिद्धित घी एवं तेल पर किए गए शोध के अध्ययन से इसके प्रयोग की अवधि को दो साल निश्चित किया गया है। एसोसियट प्रोफेसर आनन्द चौधरी के अनुसार ड्रग्स एण्ड कॉस्मेटिक एक्ट 1945 के नियम 161 (बी) के अनुसार आयुर्वेदिक, यूनानी दवाओं पर उत्पादन एवं एक्सपायरी की तिथि प्रिंट होनी चाहिए। यह नियम अप्रैल 2010 से लागू हो चुका है। अतः उपभोक्ताओं को यह मालूम होना चाहिए, कि एक्सपायरी आयुर्वेदिक एवं यूनानी दवाओं को नहीं खरीदा जाये।औषधि सिद्धित घी को को भी दो वर्ष पूर्व ही प्रयोग में लाना निश्चित किया गया है। उन्होंने बताया, कि केवल आसव-अरिष्ट एवं भस्में ही एकमात्र ऐसी आयुर्वेदिक दवायें हैं, जिनपर एक्सपायरी तिथि नही लिखी जायेगी। इन्हें दो वर्षो के बाद भी प्रयोग में लाया जा सकता है। इसीप्रकार महानारायण तेल जैसे आयुर्वेदिक दर्दनाशक तेलों की एक्सपायरी तिथि भी 18-24 महीने होगी।

अतः उपभोक्ता किसी भी औषधि सिद्धित तेलों, घी या अन्य आयुर्वेदिक एवं यूनानी दवाओं को खरीदने से पूर्व एक्सपायरी तिथि अवश्य देखें।

योग करें एवं लीवर को तंदरूस्त बनायें

योग के यकृत पर अच्छे प्रभाव से सम्बंधित होने का एक लेख हाल ही में इन्टरनेशनल बिजनेस टाईम्स नामक पत्रिका में प्रकाशित हुआ है। लीवर शरीर में विटामिन,मिनरल एवं शर्करा को संचित कर रखता है। इसके अलावा लीवर में १ हजार से अधिक एन्जाइम्स पाये जाते हैं,जिनकी पाचन क्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके अलावा लीवर अतिरिक्त इस्ट्रोजन हार्मोन के अपचय का स्थल भी है। भोजन की कमी,शराब,दर्दनिवारक दवाओं का असयंमित प्रयोग लीवर को नुकसान पहुँचाता है। नियमित योग के अभ्यास से तनावमुक्त होकर लीवर की कार्य प्रणाली सुचारू रूप से काम करती है।

भारत एवं आस्ट्रेलिया बढ़ायेंगे मेडिकल रिसर्च में संयुक्त कदम

भारतसरकार के बायोटेक्नोलॉजी विभाग एवं आस्ट्रेलिया सरकार के बायोटेक्नोलॉजी फंड की मद्द से भारत में मेडिकल डायग्नोस्टिक,स्टेमसेल,वेक्सीन डेवलपमेंट आदि क्षेत्रों में सयुक्त रूप से शोध को बढ़ावा दिया जायेगा इस सम्बंध में इन्डो आस्ट्रेलियन बायोटेक्नोलॉजी फंड की स्थापना की गयी है।

इन्टरनेट पर स्लिम करने वाली हर्बल दवाईयों के विज्ञापनों पर पर लगी रोक

कुछ वजन कम करने वाली हर्बल दवाईयों की विक्री से सम्बंधित इन्टरनेट पर आ रहें विज्ञापनों पर ब्रिटिश सरकार ने प्रतिबंध लगाया है। इनमें से कुछ दवाओं में 'साईब्यूट्रामिन' नामक रसायन पाया गया है,जिससे हृद्याघात की सम्भावना होती है। ब्रिटेन की मेडिसिन एण्ड हेल्थकेयर प्रोडक्ट एजेन्सी ने लोगों को इन दुबला बनाने वाली हर्बल दवओं से सावधान किया है। रिर्चड वुडफील्ड,मेनेजर,मेडिसिन एण्ड हेल्थकेयर प्रोडक्ट एजेन्सी का कहना है,कि केवल हर्बल होना मात्र ही इन प्रोडक्टस की सुरक्षा मापदंडों की गारंटी नहीं देता। उनका आगे कहना है,कि हमारी लोगों से अपील होगी कि इन्टरनेट पर आ रहे ऐसे विज्ञापनों से सावधान होकर केवल उन्हीं हर्बल उत्पादों को प्रयोग में लायें जिनका ट्रेडिशनल हर्बल रजिस्ट्रेशन हुआ हो

स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा योग पर किये जा रहे अध्ययनों के बजट की वृद्धि

योग अब रोगों से बचाव के लिए भारत सरकार की प्राथमिकता पर है। वर्ष 2010-2011 में आयुष विभाग के अर्न्तगत योग पर किये जा रहे शोध को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 19 लाख रूपये स्वीकृत किये गये थे तथा 70 लाख रूपये सेन्ट्रल कांउसिल फॉर रिसर्च इन योग एण्ड नेचुरोपैथी को दिये गये हैं।

आयुष विभाग द्वारा बेंगलोर स्थित सेंटजोन रिसर्च इन्स्टीच्यूट को योग के तनाव एवं मस्तिष्क पर होने वाले प्रभाव के अध्ययन हेतु यह बजट आंवटित किया गया है।

आयुष विषय की कार्यशाला का देहरादून में हुआ उद्घाटन

उत्तराखण्ड के मुख्यमंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक ने देहरादून स्थित ओएनजीसी सभागार में आयोजित 'जन स्वास्थ्य में आयुष' विषय कार्यशाला का उद्घाटन करते हुए कहा कि आयुष के उत्थान के लिए राज्य सरकार सभी आवश्यक कदम उठायेगी। उन्होंने कहा कि वर्तमान युग की आवश्यकताओं के अनुरूप आयुष में नवीन शोध एवं अनुसंधान की आवश्यकता है। उन्होने कहा कि आयुर्वेदिक चिकित्सा हेतु दवाओं में वैल्यू एड्ड् मूल्य वृद्धि भी जरूरी है। उदाहरण के लिए परम्परागत चूर्ण के स्थान पर लोगों को टैबलेट और कैप्सूल में दवाईयां उपलब्ध कराई जानी चाहिए। उन्होंने कहा कि कई ऐसी आयुर्वेद की दवाईयां है, जिनका उपयोग अब एलोपैथिक चिकित्सक भी करने लगे हैं। उन्होंने कहा कि आयुर्वेद के प्रति लोगों में विश्वास बढ़ा है और अब आवश्यकता इस बात की है,कि इस विश्वास को बनाये रखा जाय। उन्होंने जड़ी-बूटी उत्पादकता को बढ़ावा देने की बात भी कही जिससे मांग बढ़ने पर आयुर्वेदिक दवाईयों में मिलावट न हो। उन्होंने ने कहा कि उत्पादक, दोहन एवं विपणन सभी स्तरों पर क्वालिटी कंट्रोल जरूरी है।

नमक का संयमित प्रयोग जीवन को बचाने में उपयोगी

हाल के एक शोध से यह पता चला है कि भोजन में नमक की मात्रा कम करना करोड़ों लोगों की जिन्दगी को बचा सकता है। यूनाईटेडनेशन की एक गोष्ठी को सम्बोधित करते हुए प्रोफेसर फ्रेन्सिसको ने कहा कि भोजन में नमक की मात्रा को कम करने से हृदयाघात से होनेवाली मृत्यु के खतरे को कम किया जा सकता है। अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकला है,कि नमक का उपयोग कम करने से आर्थिक लाभ के साथ-साथ शारीरिक लाभ भी मिलता है। विश्वस्वास्थ्यसंगठन ने वर्ष 2024 तक भोजन में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन नमक की मात्रा को पाँच ग्राम (लगभग एक चम्मच) तक लाने का लक्ष्य रखा है। अधिकांश देशों में लोग दैनिक रूप से इस मात्रा से अधिक नमक का प्रयोग कर रहे हैं। उदाहरण के तौर पर ब्रिटेन में प्रतिदिन तीन ग्राम नमक की मात्रा को कम करते हुए लाने से प्रतिवर्ष हृदयाघात एवं कोरोनरी हृदयरोग से होने वाली मृत्यु को 8 हजार एवं 12 हजार तक कम किया जा सका है। इसप्रकार अमेरिका में भोजन में नमक की मात्रा को कम कर प्रतिवर्ष कोरोनरी हृद्य रोग एवं हृद्याघात इत्यादि के रोगियों में काफी कमी देखी गयी तथा इससे 24 अरब डॉलर की बचत भी आँकी गयी है। अर्थात् भोजन में नमक की मात्रा को कम कर हम सेहत के साथ-साथ आर्थिक लाभ भी पा सकते हैं। बस आवश्यकता है जागरूकता की।

सूचना

आयुष दर्पण के किसी भी प्रतिनिधि को किसी भी प्रकार की सदस्यता शुल्क/विज्ञापन शुल्क देने से पूर्व सम्बंधित व्यक्ति की जानकारी,कार्यालय,आयुष दर्पण से अवश्य लें तथा भुगतान आयुष दर्पण के पक्ष में ड्राफ्ट/चेक जो पिथौरागढ़ में देय हो, द्वारा ही करें। सदस्यता शुल्क देने के बाद रसीद प्राप्त करना सुनिश्चित करें तथा अपना पूर्ण पता मो. 9411137993 पर SMS करें।

संपादक

अनुरोध

आयुष दर्पण के जिन पाठकों की सदस्यता समाप्त हो गयी है,उनसे अनुरोध है,कि वे कृपया अपनी सदस्यता को आगे बढ़ा लें,ताकि उन्हें डाक द्वारा पत्रिका भेजी जा सके। यदि आप पत्रिका पंजीकृत डाक से मंगाना चाहते हैं तो प्रत्येक अंक के साथ रूपये दस डाक खर्च अतिरिक्त भेजें। आयुष दर्पण के पाँच वर्षीय या आजीवन सदस्यों को पिछले सभी अंक निःशुल्क भेजे जायेंगे।

संपादक